CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

195

देवेन्द्रगणिकृतं

अगडदत्तचरियं

(अगडदत्तचरित)

[मूलपाठ, शब्दार्थ, हिन्दी-अनुवाद एवं विषय-मूल्यांकन]

5262

सम्पादन एवं अनुवाद

प्रो० डॉ० राजाराम जैन

पंकज प्रकाशन, आरा

१९९१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Devendra Gaṇi's

Agaḍadatta Ċariyaṃ

[Text, With Words Meaning, Hindi Translation & Critical Studies]

5262

Edited and Translated by

Dr. RAJARAM JAIN

Univ. Prof. & Head of the P. G. Dept. of Sanskrit & Prakrit

H. D. JAIN COLLEGE, ARRAH (Bihar)

(*Magadh University*)

PANKAJ PRAKASHAN

1991

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Publisher :
Rajesh Pankaj
Pankaj Publications
Mahajan Toli No. 2
ARRAH (BIHAR) : 802301

Jan. 1991

1000 Copies only

Price : Rs 15.00 only

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशकीय

प्रस्तुत ग्रन्थ का अभी तक हिन्दी-अनुवाद नहीं हुआ था, अतः छात्रों की कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए इसमें मूल गाथाओं का हिन्दी-अनुवाद तथा कठिन शब्दों के अर्थ भी दिये जा रहे हैं। अभ्यासार्थं कुछ प्रश्न एवं उनके उत्तर भी प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जिससे कॉलेज की नियमित शिक्षा पाने में असमर्थ दूर-दराज के साधनविहीन छात्र भी लाभान्वित हो सकें।

हम लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् डॉ० राजाराम जैन, आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत-प्राकृत-विभाग, ह० दा० जैन कॉलेज, आरा के प्रति अपना सादर आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने हमारे अनुरोध को स्वीकार कर अगडदत्तकथा को सर्वसुलभ बनाने में कृपापूर्ण सहयोग किया।

ग्रन्थ के शुद्ध मुद्रण की ओर हमारा विशेष ध्यान रहा है। फिर भी जो त्रुटियाँ रह गई हों, उन्हें प्रबुद्ध पाठक सुधारकर पढ़ें, यही सविनय आग्रह है।

—पंकज

महाजन टोली नं० २
आरा (बिहार)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भूमिका

अगडदत्तकथा एक अतिशय रमणीय लोककथा है। इसका नायक अगडदत्त घोर संघर्षों के बीच भी आशावादी, एकाकी होने पर भी अदम्य साहसी एवं पराक्रमी, चतुर और मधुरभाषी होने के कारण युग-युग से जनता-जनार्दन में अत्यन्त लोकप्रिय रहा है। यही कारण है कि लोक-कहावतों एवं मुहावरों में भी उसका नाम प्रचलित मिलता है। असम्भव कार्य को भी सम्भव कर देने वाले किसी व्यक्ति को हम सहज ही 'अगड़धत' कह देते हैं। वस्तुतः, यह 'अगड़धत' और कोई नहीं, प्रस्तुत 'अगडदत्तकहा' का नायक 'अगडदत्त' ही है।

प्राचीनकालीन लोककथाओं में बिखरे हुए, इस अगडदत्त कथा के बीजों को समेटकर चतुर्थ शती के महान् प्राकृत-कथाकार **आचार्य संघदास गणी** ने अपनी रचना 'वसुदेवहिण्डी' में सर्वप्रथम इसे एक व्यवस्थित रूप प्रदान किया और फिर उस आधार पर अनेक कवियों ने इसे अनेक रूप प्रदान किये। विक्रम की १२वीं शती के **आचार्य देवेन्द्र गणी** उन महाकवियों में सर्वप्रथम हैं, जिन्होंने इस कथानक को घटना-प्रधान, अलौकिक, चमत्कारपूर्ण, अत्यन्त सरस एवं मार्मिक तो बनाया ही, साथ ही काव्यगुणों से समन्वित कर इसे एक सुन्दर अलंकृत काव्य का रूप भी प्रदान किया।

प्रस्तुत कथानक के माध्यम से कवि **देवेन्द्र गणी** ने इस सिद्धान्त की स्थापना की है कि व्यक्तित्व एवं चरित्र-विहीन मानव भी अनुकूल परिस्थिति एवं वातावरण प्राप्त कर उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच सकता है। प्रारम्भ में, अगडदत्त एक आवारा, अज्ञान और धूर्त युवक के रूप में हमारे सम्मुख आता है, पर **'संगति ही गुण उपजै'** की कहावत के अनुसार वाराणसी में एक सद्गुरु का सम्पर्क प्राप्त होते ही उसका जीवन सर्वथा परिवर्त्तित हो जाता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथा वह कर्त्तव्यनिष्ठ, कष्टसहिष्णु, अथक परिश्रमी, दयालु एवं सदुद्देश्य की सिद्धि के निमित्त **'शरीरं पातयामि कार्यं साधयामि वा'** का सिद्धान्त अपनाते हुए दृष्टिगोचर होता है।

वर्त्तमान युग–सन्दर्भ में यह रचना अपना विशेष महत्त्व रखती है। इसका कथानक अत्यन्त सरल, सरस एवं मार्मिक होने के साथ ही चरित्र-निर्माण में सहायक, सत्कार्य-प्रेरक एवं विचारोत्तेजक है, जिससे इसकी उपादेयता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

'अगडदत्तकहा' की भाषा महाराष्ट्री-प्राकृत है, किन्तु 'सेतुबन्ध', 'गउडवहो', 'लीलावइ' प्रभृति महाकाव्यों की महाराष्ट्री-प्राकृत से कुछ भिन्न। वस्तुतः, भाषा की सरलता के आधार पर मेरी धारणा बनती है कि यह रचना तत्कालीन छात्र-समुदाय के चरित्र-निर्माण के लिए लिखी गई होगी, जो आज भी उस उद्देश्य की पूर्त्ति में समर्थ है।

आरा
२८-३-१९९१

—राजाराम जैन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय-क्रम

प्रकाशकीय : क

भूमिका : ख

- अगडदत्तचरियं : मूलपाठ : १—२६
- शब्दार्थ एवं हिन्दी-अनुवाद : ३१-१०७
- महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तरी : १०८-१२८
  - अगडदत्तकथा का मूल्यांकन : १०८
  - कथावस्तु : १०९
  - नायक की चरित्रगत विशेषताएँ : १२०
  - अगडदत्त का चरित्र-चित्रण : १२३
  - कवि-परिचय : १२६
  - व्याकरणबोधक टिप्पणियाँ : १२७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

5262

देवेन्द्रगणिकृतं

अगडदत्तचरियं

अत्थि जए सुपसिद्धं संखउरं पुरवरं गुणसमिद्धं ।
तम्मि य राया जणजणियतोसओ सुंदरो नामं ॥१॥

तस्स कुलरूवसरिसी समग्गजणजणियलोयणाणंदा ।
अंतेउरस्स पढमा सुलसा नामेण वरभज्जा ॥२॥

तीए कुच्छिपसूओ पुत्तो नामेण अगडदत्तो त्ति ।
अणुदियहं सो पवरं वड्ढंतो जोव्वणं पत्तो ॥३॥

सो य केरिसो—

धम्मत्थदयारहिओ गुरुवयणविवज्जिओ अलियवाई ।
पररमणिरमणकामो निस्संको माणसोंडीरो ॥४॥

मज्जं पिएइ जूयं रमेइ पिसियं महुं च भक्खेइ ।
नडचेडयवेसाविंदपरिगओ भमइ पुरमज्झे ॥५॥

अन्नम्मि दिणे रन्नो पुरवरलोएण वइयरो सिट्ठो ।
जह कुमरेण नराहिव नयरे असमंजसं विहियं ॥६॥

सुणिऊण पउरवयणं राया गुरुकोवजायरत्तच्छो ।
फुडभिउडिभासुरसिरो एयं भणिउं समाढत्तो ॥७॥

रे रे भणह कुमारं 'सिग्घं चिय वज्जिऊण मह विसयं ।
अन्नत्थ कुणसु गमणं मा भणसु य जं न कहियं ति' ॥८॥

नाऊण वइयरं सो कुमरो चइऊण नियपुरं रम्मं ।
खग्गसहाओ चलिओ गुरुमाणपवड्ढियामरिसो ॥९॥

लंघित्ता गिरिसरिकाणणाइं पुरगोट्ठगामवंदाइं ।
नियनयराओ दूरे पत्तो वाणारसिं नयरिं ॥१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तियचच्चरमाईसु असहाओ भमइ नयरमज्झम्मि ।
चित्ते अमरिसजुत्तो करि व्व जूहाउ परिभट्ठो ॥११॥

हिंडंतेणं च तया पुरीए मग्गेसु रायतणएणं ।
बहुतरुणनरसमेओ एक्को किल जाणओ दिट्ठो ॥१२॥

सो य केरिसो—

सत्थत्थकलाकुसलो विउसो भावन्नुओ सुगंभीरो ।
निरओ परोवयारे किवालुओ रूवगुणकलिओ ॥१३॥

नामेण पवणचंडो वाईणं न उण सीसाणं ।
संदणहयगयसिक्खं साहितो निवसुयाण तहिं ॥१४॥

तस्स समीवम्मि गओ चरणजुयं पणमिउं समासीणो ।
'कत्तो सि तुमं सुन्दर' अह भणिओ पवणचंडेण ॥१५॥

एगंते गतूणं सखउराओ जहा विणिक्खंतो ।
कहिओ तह वुत्तंतो कुमरेणं पवणचंडस्स ॥१६॥

चंडेणतओ भणिओ अच्छसु एत्थं कलाउ सिक्खंतो ।
परमत्तणो य गुज्झं कस्स वि मा सुयणु पयडेसु ॥१७॥

उट्ठेउं उज्झाओ पत्तो गेहम्मि रायसुयसहिओ ।
साहेइ महिलियाए 'एसो मह भाउअसुओ' त्ति ॥१८॥

ण्हविऊणं कुमरवरं दाऊणं पवरवत्थमाभरणं ।
तो भोयणावसाणे भणियमिणं पवणचंडेणं ॥१९॥

भवणधणं परिवारो संदणतुरयाइ सतियं मज्झं ।
सव्वं तुज्झायत्तं विलससु हियइच्छियं कुमर ॥२०॥

एवं सो किर संतुट्ठमाणसो मुक्ककूरववसाओ ।
चिट्ठइ तस्सेव घरे सव्वाउ कलाउ सिक्खंतो ॥२१॥

गुरुयणगुरुविणयपवन्नमाणसो सयलजणमणाणंदो ।
बावत्तरिं कलाओ गेण्हइ थेवेण कालेणं ॥२२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं सो कुमरवरो नायकलो परिसमं कुणेमाणो।
भवणुज्जाण चिट्ठइ अणुदियहं तप्परो घणियं ॥२३॥

उज्जाणस्स समीवे पहाणसेट्ठिस्स संतियं भवणं।
वायायणरमणीयं उत्तुंगमईव वित्थिण्णं ॥२४॥

तत्थत्थि सेट्ठिधूया मणोहरा मयणमंजरी नाम।
सा घरसिरमारूढा अणुदियहं पेच्छए कुमरं ॥२५॥

अह तम्मि साणुराया अणवरयपलोयणं कुणेमाणी।
विक्खिवइ कुसुमफलपत्तलेट्ठुए किंपि चिंतंती ॥२६॥

हिययत्थं पि हु बालं कुमरो न निरिक्खए कलारसिओ।
आसंकाए गुरूणं विज्जाए गहणलोभेण ॥२७॥

अन्नदिणम्मि तीए वम्महसरपसरविहुरियमणाए।
गहणे कलाण सत्तो पहओ उ असोगगुच्छेणं ॥२८॥

कुमरेण तम्मि दियहे सा बाला पलोइया य सविसेसं।
कंकेल्लिपल्लवंतरियतणुलया संभमुब्भंता ॥२९॥

चिंतियं च—

किं एसा अमरविलासिणी उ अह होज्ज नागकन्न व्व।
कमल व्व किं नु एसा सरस्सई किं व पच्चक्खा ॥३०॥

अहवा पुच्छामि इमं कज्जेणं केण चिट्ठइ एत्थं।
इय चिंतिऊण हियए कुमरो पयडं इमं भणइ ॥३१॥

'का सि तुमं वरबाले ईसिं पयडेसि कीस अप्पाणं।
विज्जागहणासत्तं कीस ममं सुयणु खोभेसि' ॥३२॥

सुणिउं कुमारवयणं वियसियदिट्ठीए विहसियमुहीए।
पयडंतदंतकिरणावलीए तीए इमं भणियं ॥३३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"नयरपहाणस्स अहं धूया सेट्ठिस्स बंधुदत्तस्स ।
नामेण मयणमंजरी इह चेव विवाहिया नयरे ॥३४॥

जद्दिवसाओ दिट्ठो सुन्दर तं कुसुमचावसारिच्छो ।
तद्दियहाओ मज्झं असुहतरु वड्ढिओ हियए ॥३५॥

जेण—

निद्दा वि हु नट्ठा लोयणाण देहम्मि बड्ढिओ दाहो ।
असणं पि नो य रुच्चइ गुरुवियणा उत्तमंगम्मि ॥३६॥

ताव च्चिय होइ सुहं जाव न कीरइ पिओ जणो को वि ।
पियसंगो जेण कओ दुक्खाण समप्पिओ अप्पा ॥३७॥

पेरिज्जंतो उ पुराकएहि कम्मेहि केहि वि वराओ ।
सुहमिच्छंतो दुल्लहजणाणुराए जणो पडइ ॥३८॥

ता जइ मए समाणं संगं न य कुणसि तरुणिमणहरणं ।
होही तुह नियवज्झा फुडं जओ नत्थि मे जीय ॥३९॥

सो निसुणिऊण वयणं तीए बालाए चिंतए हियए ।
मरइ फुडं चिय एसा मयणमहाजलणदड्ढंगी ॥४०॥

निसुणिज्जइ पयडमिणं भारहरामायणेसु सत्थेसु ।
जह दस कामावत्था होंति फुडं कामुयजणाणं ॥४१॥

पढमा जणेइ चित्तं बीयाए महइ संगमसुहं ति ।
दीहुण्हा नीसासा हवंति तइयाए वत्थाए ॥४२॥

जरयं जणइ चउत्थो पंचमवत्थाए डज्झए अंगं ।
न य भोयगं च रुच्चइ छट्ठावत्थाए कामिस्स ॥४३॥

सत्तमियाए मुच्छा अट्ठमवत्थाए होइ उम्माओ ।
पाणाण य संदेहो नवमावत्थाए पत्तस्स ॥४४॥

दसमावत्थाए गओ कामी जीवेण मुच्चए नूणं ।
ता एसा मह विरहे पाणाण वि संसयं काही ॥४५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिभाविऊण हियए रायकुमारेण भावकुसलेणं।
भणिया सिणेहसारं सा बाला महुरवयणेण ॥४६॥

'सुन्दरि सुन्दररन्नो सुन्दरचरियस्स विउलकित्तिस्स।
नामेण अगडदत्तं पढमसुयं मं वियाणेहि ।४७॥

कलयायरियसमीवं कलगहणत्थं समागओ एत्थ।
पविसिस्सं जम्मि दिणे तए वि घेत्तुं गमिस्सामि' ॥४८॥

कह कह वि सा मयच्छी वम्महसरपसरसल्लियसरीरा।
एमाइ बहुपयारं भणिऊण कया समासत्था ॥४९॥

सो रायसुओ तत्तो तीए गुणरूवरंजियमणो हु।
नियनिलए संपत्तो चितंतो संगमोवायं ॥५०॥

अन्नम्मि दिणे सो रायनंदणो वाहियाए मग्गेणं।
तुरयारूढो वच्चइ ता नयरे कलयलो जाओ ॥५१॥

अवि य—

किं चलिउ व्व समुद्दो किं वा जलिओ हुयासणो घोरो।
किं पत्तं रिउसेन्नं तडिदंडो निवडिओ किं वा ॥५२॥

एत्थंतरम्मि सहसा दिट्ठो कुमरेण विम्हियमणेण।
मयवारणो उ मत्तो निवाडियालाणवरखंभो ॥५३॥

मिठेण वि परिचत्तो मारेंतो सोंडगोयरं पत्तो।
सवडंमुहं चलंतो कालो व्व अकारणे कुद्धो ॥५४॥

तुट्टपयबंधरज्जू संचुण्णियभवणहट्टदेवउलो।
खणमेत्तेण पयंडो सो पत्तो कुमरपुरओ त्ति ॥५५॥

तं तारिसरूवधरं कुमरं दट्ठूण नायरजणेहिं।
गहिरसरेणं भणिओ ओसर ओसर करिपहाओ ॥५६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमरेण वि नियतुरयं परिचइऊणं सुदक्खगइगमणं ।
हक्कारिओ गइंदो इंदगइंदस्स सारिच्छो ॥५७॥

सुणिउं कुमारसद्दं दंती पज्झरियमयजलपवाहो ।
तुरिओ पहाविओ सो कुद्धो कालो व्व कुमरस्स ॥५८॥

कुमरेण य पाउरणं संवेल्लेऊण हिट्ठचित्तेणं ।
धावंतवारणस्सा सोंडापुरओ उ पक्खित्तं ॥५९॥

कोवेण धमधमेंतो दंतच्छोभे य देइ सो तम्मि ।
कुमरो वि पिट्ठभाए पहणइ दढमुट्ठिपहरेणं ॥६०॥

ता ओधावइ रोवइ चलइ खलइ परिणओ तहा होइ ।
परिभमइ चक्कभमणं रोसेण धमधमेंतो सो ॥६१॥

अइव महंत वेलं खेल्लावेऊण तं गयं पवरं ।
नियवसे काऊणं आरूढो ताव खंधम्मि ॥६२॥

अह तं गइंदखेडं मणोहरं सयलनयरलोयस्स ।
अंतेउरसरिसेणं पलोइयं नरवरिंदेणं ॥६३॥

दट्ठुं कुमरं गयखंधसंठियं सुरवइं व सो राया ।
पुच्छइ नियभिच्चयणं को एसो गुणनिही बालो ॥६४॥

तेएणं अहिमयरो सोमत्तणएण तह य निसिनाहो ।
सव्वकलागमकुसलो वाई सूरो सुरूवो य ॥६५॥

एक्केण तओ भणियं 'कलयायरियस्स मंदिरे एसो ।
कलपरिसमं कुणंतो दिट्ठो मे तत्थ नरनाह' ॥६६॥

तो सो कलयायरिओ नरवइणा पुच्छिओ हरिसिएणं ।
को एसो वरपुरिसो गयवरसिक्खाए अइकुसलो ॥६७॥

अभयं परिमग्गेउं कलयायरिएण कुमरवुत्तंतो ।
सविसेसं परिकहिओ नरवइणो बहुजणजुयस्स ॥६८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तं निसुणिऊण राया नियहियए गरुयतोसमावन्नो ।
संपेसइ पडिहारं कुमरं आणेहि ममं पासं ॥६९॥

गयखंधपरिट्ठियओ अह सो भणिओ य दारवालेणं ।
'हक्कारइ नरनाहो आगच्छसु कुमर रायउलं ॥७०॥

रायाएसेण तओ हत्थि खंभम्मि आगलेऊणं ।
कुमरो ससंकहियओ पत्तो नरनाहपासम्मि ॥७१॥

जाणूकरुत्तमंगे महीए विणिहित्तु गरुयविणएणं :
जाव न कुणइ पणामं अवगूढो ताव सो रन्ना ॥७२॥

तंबोलासणसंमाणदाणपूयाइपूइओ अहियं ।
कुमरो पसन्नहियओ उवविट्ठो रायपासम्मि ॥७३॥

तओ चिंतियं राइणा 'उत्तमपुरिसो एसो । जओ—

विणओ मूलं पुरिसत्तणस्स मूलं सिरीए ववसाओ ।
धम्मो सुहाण मूलं दप्पो मूलं विणासस्स ॥७४॥

अन्नं च—

को चित्तेइ मऊरं गइं च को कुणइ रायहंसाणं ।
को कुवलयाण गंधं विणयं च को कुलप्पसूयाणं ॥७५॥

अवि य—

साली भरेण तोएण जलहरा फलभरेण तरुसिहरा ।
विणएण य सप्पुरिसा नमंति न हु कस्स वि भएण' ॥७६॥

तो विणयरंजिएणं कुसलपउत्तीउ पुच्छिओ कुमरो ।
रन्ना कलाण गहणं सविसेसं तह य पुट्ठं ति ॥७७॥

नियगुणगहणं पयडेइ नो य लज्जाए जाव सो ताव ।
उज्झाएणं भणियं "पहु निउणो एस सव्वत्थं ॥७८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परं महाराय—

नियगरुयपयावपसंसणेण लज्जंति जे महासत्ता ।
इयरा पुण अलियपसंसणे वि अंगे न मायंति" ॥७६॥

एवं च तस्स रन्नो कुमारचरियम्मि खित्तचित्तस्स ।
ता सयलो पुरलोओ समागओ रायपासम्मि ॥८०॥

वररयणअंवराइं सुयंधकुसुमाइं फलसणाहाइं ।
मुक्काइं रायपुरओ पउरेणं परिहवगएणं ॥८१॥

तं पुरजणकोसल्लं नरवइणा अप्पियं कुमारस्स ।
अह ते कयपणिवाया विन्नत्ति काउमारद्धा ॥८२॥

तं जहा—

"देव इमं तुह नयरं कुबेरपुरविहवअहितधणनिवहं ।
कइवयदिणाण मज्झे चोरस्स वि मंदिरं जायं ॥८३॥

केणावि तक्करेणं दुट्ठेणं खत्तचारनिउणेणं ।
मुट्ठं नरवरनयरं एण्हि रक्खसु किं बहुणा" ॥८४॥

कडुयवयणेहिं भणिओ रन्ना आरक्खिओ पुरवरस्स ।
'रे रे पेच्छंतस्स वि मुट्ठं सव्वं पि तुह नयरं" ॥८५॥

अह विन्नत्तं तेणं 'देव अणेगाणि अम्ह दियहाणि ।
जोयंताणं चोरं तह वि हु कत्थइ न सो दिट्ठो' ॥८६॥

एत्थंतरम्मि राया विन्नत्तो अगडदत्तकुमरेणं ।
'पहु देहि ममाएसं लहेमि पुरतक्करं सिग्घं ॥८७॥

मज्झे सत्तदिणाणं पुरचोरं नो लहामि जइ नाह ।
तो जलियजलणजालावलीसु जालेमि नियदेहं ॥८८॥

एयं कुमारवयणं नरवइणा निसुणिऊण सपइन्नं ।
अणुमन्निऊण भणिओ 'सिज्झेऊ समीहियं तुज्झं, ॥८९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अह सो गहियपइन्नो रायाणं पणमिउं अणुव्विग्गो।
परिभमइ नयरमज्झे जोयंतो तक्करनिवासे ॥६०॥

अवि य—

वेसाण मंदिरेसु पाणागारेसु जूयठाणेसु।
कुल्लूरियावणेसु य उज्जाणनिवाणसालासु ॥६१॥
मढसुन्नदेउलेसु चच्चरचउहट्टसालासु।
तक्करगमं नियंतो हिंडइ एक्कल्लओ कुमरो ॥६२॥

ता जा छट्ठो दियहो वोलीणो नो य तक्करो दिट्ठो।
सत्तमदिणम्मि कुमरो गहिओ चिंताए सविसेसं ॥६३॥

"किं वच्चामि विएसं किं वा तायस्स अंतियं जामि।
हरिऊण तं मयच्छि किं वा रण्णम्मि गच्छामि ॥६४॥

किंतु न जुत्तं एयं निम्मलकुलसंभवाण पुरिसाणं।
जं किर नियजीहाए पडिवन्नं अन्नहा होइ ॥६५॥

जेण—

छिज्जउ सीसं अह होऊ बंधणं वयउ सव्वहा लच्छी
पडिवन्नपालणे सुपुरिसाण जं होइ तं होउ ॥६६॥

नेयं महव्वयं खलु नरट्ठिमुद्दाए जं समुव्वहणं।
पडिवन्नपालणे चिय महव्वयं धीरपुरिसाणं" ॥६७॥

एवं च बहुवियप्पे नियमणे भाविऊण सो कुमरो।
अवरण्हयवेलाए पुरस्स वाहिम्मि संपत्तो ॥६८॥

एगस्स पवरकिसलयसमूहमुविलस्स सीयछायस्स।
उत्तुंगवियडसाहाउलस्स सहयाररुक्खस्स ॥६९॥

उवविट्ठो चिट्ठइ हेट्ठयम्मि चिंताभरेण सुढियंगो।
जोयंतो दिसिचक्कं विज्जाभट्ठो व्व खयरिंदो ॥१००॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एत्थंतरम्मि एगो सहसा परिवायगो समणुपत्तो।
कयधाउवत्थवेसो मुंडियसिरकुच्चसच्चूलो ॥१०१॥
दंडत्तियकुंडीचमरसंगओ तह गणेत्तिया हत्थो।
किं किं पि मुणमुणितो संतत्तो कुमरपुरओ त्ति ॥१०२॥
करिसोंडाभुयदंडो विसालवच्छत्थलो फरुसकेसी।
नवजोव्वणो रउद्दो रत्तच्छो दीहजंघो य॥१०३॥
निज्झाइऊण अह सो सासंको चिंतए मणे कुमरो।
'एवंविहरूवेणं हविज्ज एसो फुडं चोरो' ॥१०४॥
एत्थंतरम्मि तेणं भणिओ कुमरो पिएहिं वयणेहिं।
'कत्तो सि तुमं सुधुरिस केण व कज्जेण चिट्ठेसि, ॥१०५॥
नाऊण तस्स भावं भणियं कुमरेण बुद्धिनिउणेणं।
'दालिद्दे णक्कंतो भमामि नयरीए सुन्नमणो' ॥१०६॥
'मा सोयसु पुत्त तुमं अज्जं छिंदामि तुज्झ दालिद्दं।
देमि समीहियदव्वं' भणियं परिवायगेणं ति ॥१०७॥
कुमरेणं संलत्तं ,तुम्हाणं चेव पयपसाएणं।
नासइ मह दालिद्दं संपज्जइ ईहियं कज्जं' ॥१०८॥
एवं जंपंताणं नयणपहं वज्जिऊण दिवसयरो।
अद्दंसणमावन्नो दोसभएणं व सप्पुरिसो ॥१०९॥
संझुज्जोयम्मि गए पयडीहूयम्मि रयणितमनियरे।
कड्ढेउं कोसाओ करवालं दारुणयारं ॥११०॥
तुरियगई संचलिओ सो कुमरं भणइ एहि मह पिट्ठं।
जेण समीहियकज्जं सव्वं कारेमि किं बहुणा' ॥१११॥
तावय दोन्नि वि सिग्घं संपत्ता नयरिमज्झयारम्मि।
परिभमिऊणं थोवं उवविट्ठा एगदेसम्मि ॥११२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिवायगेण ताव य ईसरवणियस्स मंदिरे तुंगे।
सुहभेयभित्तिभाए खत्तं आलेहियं तेण ॥११३॥

जोएवि भित्तिसंधिं खणियं खत्तं सुतिक्खसत्थेणं।
सिरिवच्छसच्छहं सुप्पवेसनिग्गमणमइगूढं ॥११४॥

निज्झाइऊण सुइरं निहुयपयं पविसिऊण सो धुत्तो।
कड्ढइ महग्घभण्डं पभूयपेडाउ तत्थेव ॥११५॥

ठविउं कुमरं आणिय देवउलाओ दरिद्दिए पुरिसे।
ते गेण्हाविय ताओ नयराओ निग्गया झत्ति ॥११६॥

तओ कुमरेण चिंतियं—

"आयड्ढिऊण खग्गं छलेण पहणामि किं इहं दुट्ठं।
अहव न जुत्तं अम्हं छलघाओ कुलपसूयाणं ॥११७॥

एयनिवासं गंतुं दव्वं पेच्छामि केत्तियं हरियं।
कस्स कए अणवरयं मुसइ इमं नयरिजणनिवहं" ॥११८॥

एवं ते दोन्नि वि गहियमोसया पुरवराउ निक्खंता।
गुरुभारेण किलंता नयरुज्जाणम्मि संपत्ता ॥११९॥

परिवायगेण भणिओ कुमरो छलघायमारणनिमित्तं।
'सुपुरिस गरुया रयणी अच्छामो एत्थ उज्जाणं' ॥१२०॥

पडिवन्ने कुमरेणं तत्थुज्जाणम्मि ते समासीणा।
किल निद्दं सेवेमो चित्तेणं दो वि सासंका ॥१२१॥

खणमेत्तेणं दोन्नि वि दाहिणवामेसु बच्छमूलस्स।
अन्नोन्नघायनिरया अलीयनिद्दाइ सुत्त त्ति ॥१२२॥

ते वाहित्तयपुरिसा सुत्ता वीसत्थमाणसा सव्वे।
कुमरो वि सत्थराओ उट्ठेत्ता सणियमवक्कंतो ॥१२३॥

काउं करम्मि खग्गं अन्नस्स महातरुस्स मूलम्मि।
पेच्छंतो संचिट्ठइ अपमत्तो तस्स चरियाइं ॥१२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुत्त त्ति मुणेऊणं तेणं विणिवाइया उ ते पुरिसा ।
सयणे तमपेच्छंतो जा जोवइ तत्थ सो कुमरं ॥१२५॥

ता हक्किऊण दुट्ठं कुमरो आयड्ढिऊण करवालं ।
पहणइ जंघासन्नं भयरहिओ भीमबलजुत्तो ॥१२६॥

एगेण पहारेणं पडियं जंघाण जुयलयं तस्स ।
चक्काहओ व्व रुक्खो निवाडियो झत्ति धरणीए ॥१२७॥

गंतुं असमत्थेणं जीवियसेसेण तेण सो भणिओ ।
"आसि अहं सुपसिद्धो नामेण भुयंगमो चोरो ॥१२८॥

तह अत्थि इह मसाणे गेहं भूमीए मज्झयारम्मि ।
तत्थत्थि मज्झ भइणी वीरमई नाम जुवइ त्ति ॥१२९॥

वडपायवस्स मूले गंतूणं कुणसु तीए वाहरणं ।
जेणं भूमिघरस्स दारं उग्घाडए तुरियं ॥१३०॥

तं परिणिऊण सुंदर गेण्हसु सव्वं पि दविणजायं ति ।
चिट्ठसु तत्थ सुहेणं अहवा वसिमम्मि गच्छेसु" ॥१३१॥

एवं जंपंतो सो कुमरेणासासिओ खणं एक्कं ।
गहिऊण तस्स खग्गं पत्तो ता पेयभूमीए ॥१३२॥

गंतूण कओ सद्दो वडस्स मूलम्मि तीए जुवईए ।
आगंतूण य तीए घरस्स उग्घाडियं दारं ॥१३३॥

निज्झाइऊण सुइरं रूवं बालाए विम्हिओ सहसा ।
चिंतइ नियहियएणं एसा मयणस्स सव्वस्सं ॥१३४॥

पुट्ठो य तीए 'सुंदर कत्तो कज्जेण केण वायाओ' ।
कहिया तेण पउत्ती तं सोउं दूमिया हियए ॥१३५॥

भणिऊण महुरवयणं नीओ पायालमंदिरे कुमरो ।
गुरुगउरवेण तीए दिण्णं पवरासणं तत्थ ॥१३६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्पणयं चिय भणिओ 'अहयं एयं च विउलधणनिवहं।
तुम्हायत्तं सव्वं सुन्दर विलसेसु सच्छंदं' ॥१३७॥

पयडेउं वासहरं भणिओ 'वीसमसु एत्थ सयणिज्जे।
अहयं पुण गंतूणं आणेमि विलेवणं तुज्झ' ॥१३८।

एवं भणिऊणं सा वासहराओ विणग्गया सहसा।
कुमरो वि नीइसत्थं चिंतइ अह अप्पणो हियए ॥१३९॥

"माया अलियं लोहो मूढत्तं साहसं असोयत्तं।
निस्संसया तह च्चिय महिलाण सहावया दोसा ॥१४०॥

अन्नं च—

न घेप्पइ सुसिणेहिं न विज्जइ न गुणेहिं।
न य लज्जइ न य माणिण न य चाडुयसयसहस्सेहिं ॥१४१॥

न य खरकोमलवयणि न विहवि न जोव्वणेण।
दुग्गेज्झं मणु महिलहं चिंतहि आयरेण ॥१४२॥

अओ—

जो जाइ जुवइवग्गे सब्भाव मयणमोहिओ पुरिसो।
दुत्तरदुक्खसमुद्दे निवडइ सो नत्थि संदेहो" ॥१४३॥

एवं च भाविऊणं सयणतलं वज्जिऊण सो कुमरो।
लुक्को अन्नपएसे ठविऊणं तत्थ पडिरूवं ॥१४४॥

सयणिज्जस्स य उवरिं जंतपओगेण जा सिला ठविया।
सा झत्ति तीए मुक्का पडिया पल्लंक उवरिम्मि ॥१४५॥

नाऊण चुण्णियं तं पहिट्ठहियया पहासई पावा।
'मह भाउयं वहंतो किं जाणसि अत्तणो हियए' ॥१४६॥

सुणिऊण इमं वयणं कुमरो वि पहाविओ तयाहुत्तं।
गहिया केसकलावे भणिया सा एरिसं वयणं ॥१४७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'हा पावे को सक्कइ मं मारेउं सुबुद्धिविहवेणं ।
जो जग्गइ परछिट्ठ सो नियछिट्ठीए किं सुयइ' ॥१४८॥
गहिऊण य तं बालं वसुमइ भवणाउ निग्गओ कुमरो ।
रत्तो वि अइविरत्तो तीए अइकूरचरिएहिं ॥१४९॥
गंतुं रायसमीवे रयणिपउत्ती य साहिया तेण ।
चोरो खग्गेण हओ तस्सेसा आणिया भगिणी ॥१५०॥
तं चिय पायालहरं बीयदिणे दंसियं नरवइस्स ।
रित्थं तं नरवइणा समप्पियं नयरलोयस्स ॥१५१॥
तुट्ठेण नरवइणा दिन्ना कुमरस्स निययधूय त्ति ।
नामेण कमलसेणा कमला इव सयलजणदइया ॥१५२॥
वरगामाण सहस्सं सयं गइंदाण विउलभंडारं ।
पाइक्काणं लक्खं तुरयाणं दससहस्साइं ॥१५३॥
एवं सो लद्धजसो जणमणनयणाण पुण्णिमाचंदो ।
अलियं मुणेइ सव्वं रहिओ चिरदिट्ठबालाए ॥१५४॥

जओ—

ता लज्जा ता माणो ताव य परलोयचिंतणे बुद्धी ।
जा न विवेयजियहरा मयणस्स सरा पहुप्पंति ॥१५५॥
एवं मयणायत्तो सो चिट्ठइ जाव निययभवणम्मि ।
ता एगा वरविलया समागया कुमरपासम्मि ॥१५६॥
दिन्नासणोवविट्ठा भणिया कुमरेण केण कज्जेण ।
तं आगया सि सुदरि, सहासु नियय अहिप्पायं, ॥१५७॥
भणियं तीए निसुणसु अवहियहियओ कुमार होऊणं ।
"अहयं तुम्ह समीवे पट्ठविया मयणमंजरिए ॥१५८॥
एयं तुह संदिट्ठं 'सुंदर गुरुविरहजलणतवियाए ।
जा गच्छइ न य जीयं ता सिंचसु संगमजलेण' ॥१५९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्नं च निसुणिऊणं गयखेड्डं तक्करस्स वहणं च ।
दुट्ठित्थीपरिहरणं नरवइपमुहेण य जणेणं ॥१६०॥

साहुक्कारं तुज्झं कारंतं अहियविम्हियमणा सा ।
जीयं पि हु तुह दंसणसमुस्सुया धरइ किच्छेण" ॥१६१॥

सुणिऊण तीए वयणं दाउं हत्थट्ठियं च तंबोलं ।
भणिया सा हू इत्थी सिणेहसारेहिं वयणेहिं ॥१६२॥

"कुसले, पभणसु गंतुं मा होहि समुस्सुया दिणे कइवि ।
पत्थावं लहिऊणं सव्वं सत्थं करिस्सामि" ॥१६३॥

अन्नम्मि दिणे सहसा करहारूढा समागया पुरिसा ।
भवणम्मि पविसमाणा दिट्ठा कुमरेण हिट्ठमणा ॥१६४॥

आलिंगिउं सहरिसं अम्मापियरस्स कुसलपडिउत्ती ।
ससिणेहं परिपुट्ठा पमुक्कघणअंसुनिवहेण ॥१६५॥

तो तेहिं इमं भणियं "अम्मापियरस्स कुमर कुसलं ति ।
तह वि हु तुह विरहमहागहेण गहियाइ चिट्ठ त्ति ॥१६६॥

कइवयदिणाण मज्झे जइ गंतूणं न दंसणं कुणसि ।
तो कुमर निच्छएणं विमुक्कजीवाण वच्चिहिसि" ॥१६७॥

एवं निसामिऊणं सज्जावेऊण निययखंधारं ।
पत्तो रायसमीवे जंपइ सो एरिसं वयणं ॥१६८॥

'तायस्स समीवाओ उस्सुयकरहारुहा दुवे पुरिसा ।
पहु मज्झ आणणत्थं समागया कहसु जं जोग्गं' ॥१६९॥

नरवइणा तो भणियं 'वच्चसु तं कुमर, तायपासम्मि ।
नियपरिवारसमेओ गंतूण पुणो नियत्तेसु' ॥१७०॥

दाऊण अलंकारं संमाणेऊण महुरवयणेहिं ।
नियधूयाए समेओ नरवइणा पेसिओ कुमरो ॥१७१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काऊणं संजत्ति दावावेउं पयाणयं सिविरं ।
एगरहेणं कुमरो सयं ठिओ नयरमज्झम्मि ॥१७२॥

जामिणिपढमे पहरे दूईए संगमीए पासम्मि ।
कुमरेण नियपुरिसो पट्ठविओ जाणणट्ठाए ॥१७३॥

गंतूण तेण भणियं सिविरं अम्हाण पविसियं मग्गे ।
एगागी रायसुओ चिट्ठइ तुम्हाण कज्जेणं ॥१७४॥

ता सुंदरि गंतूणं आणसु लहु मयणमंजरिं एत्थ ।
जेण समीहियकज्जं संपज्जइ अज्ज तुम्हाणं ॥१७५॥

सुणिऊण तस्स वयणं गंतूणं संगमी तुरियतुरियं ।
नियसामिणीए साहइ जं भणियं कुमरपुरिसेण ॥१७६॥

आयण्णिऊण सहसा रहससमुच्छलियबहलरोमंचा ।
संचल्लिया खणेणं सुसहिसहाया नियघराओ ॥१७७॥

पत्ता कुमरसमीवं आरूढा मयणमंजरी जाणे ।
'आरुहसु सुयणु सिग्घं' इय भणिया रायतणएण ॥१७८॥

अह चोइऊण तुरए रज्जुं गहिऊणं वामहत्थेण ।
नीहरिउं नयरीए संपत्तो नियकडयम्मि ॥१७९॥

तुरियं पयाणढक्का दवाविया तेण पत्तमेत्तेणं ।
काऊण सुसंजत्तिं चलियं सेन्नं समत्थं पि ॥१८०॥

अणवरयपयाणेहिं विसयं लंघेवि भुवणपालस्स ।
पत्तो महाअरण्णे सावयतरुसंकुले भीमे ॥१८१॥

अइविसममहादुमसंकुलम्मि मग्गम्मि वच्चमाणस्स ।
सव्वजणाणंदयरो पाउसकालो समणुपत्तो ॥१८२॥

तम्मि य मणहरकाले वच्चइ कुमरो वणस्स जा मज्झे ।
सहस त्ति भिल्लसामी ता पडिओ तस्स सिविरम्मि ॥१८३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तस्स बलेणं बलदप्पिएण सहसा कुमारखंधारं।
पवणेण व घणवंदं पक्खित्तं चउसु वि दिसासु ॥१८४॥

एगेण संदणेणं सहिओ नियपणइणीए रायसुओ।
रणमज्झे सो थक्को हरि व्व मायंगजूहस्स ॥१८५॥

ता बाणावलिपहयं भग्गं भिल्लाण तं बलं सयलं।
अन्नन्नदिसिपलाणं गंधगयस्सेव करिजूहं ॥१८६॥

तं पुण पलायमाणं भिल्लवई पेच्छिऊण नियसेन्नं।
निट्ठुरमक्कोसंतो सहसा सवडंमुहो चलिओ ॥१८७॥

अणवरयं ते दोन्नि वि अन्नोन्नं पक्खिवंति सरनिवहे।
एक्को वि न वि छलिज्जइ निउणत्तणओ धणुव्वेए ॥१८८॥

तओ चिंतियं कुमारेण—

बुद्धीए पंवचेण य छलेण तह मंततंतजोएण।
पहणिज्जइ पडिवक्खो जस्स न नीईए सक्केज्ज ॥१८९॥

ता एसो भिल्लवई धणुगुणसत्थेसु लद्धमाहप्पो।
न य सक्को पहणेउं तेण उवायं विचिंतेमि ॥१९०॥

एवं च चिंतिऊणं भणिया कुमरेण सा निया भज्जा।
कुणसु पिए सिंगारं उवविससु रहस्स तुंडम्मि ॥१९१॥

उवविट्ठाए तीए दट्ठूणं रूवसंपयं पवरं।
दिट्ठिं तस्स निवेसइ पहओ मयणस्स बाणेहिं ॥१९२॥

नीलुप्पलपत्तसरिच्छएण आरामुहेण बाणेणं।
वच्छत्थलम्मि सहसा ता पहओ रायतणएणं ॥१९३॥

मम्मपएसम्मि हओ पडिओ भूमीए भिल्लनरनाहो।
ईसिं वियसियनयणो जंपइ सो एरिसं वयणं ॥१९४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवि य—

"नाहं तुह सरपहओ पहओ कुसुमाउहस्स बाणेण ।
अहवा किमेत्थ चोज्जं मयणेणं को वि न हु छलिओ" ॥१९५॥

एवं पयंपिऊणं कालगओ भिल्लसामिओ झत्ति ।
एत्थंतरम्मि कुमरो नियपरिवारं पलोएइ ॥१९६॥

जाव न रहे न तुरए सेवयपुरिसे य नो य वरसुहडे ।
एगरहेणं कुमरो संचलियो नियपुराहुत्तं ॥१९७॥

कहकहवि तं अरण्णं सो कुमरो लंघिऊण भयरहिओ ।
गोउलमेगं पत्तो गावीनिवहेण रमणीयं ॥१९८॥

एत्थंतरम्मि कुमरं दट्ठूणं गोउलाउ दो पुरिसा ।
पत्ता कुमरसमीवं भणंति महुरेहिं वयणेहिं ॥१९९॥

'कत्तो सि तुमं नरवर कत्थ व वच्चिहिसि कहसु अम्हाणं' ।
'संखउरे वच्चामो' भणिया ते रायतणएणं ॥२००॥

तो तेहि पुणो भणियं "सुपुरिस अम्हे वि तुज्झ सत्थेण ।
संखउरे वच्चामो जइ सुपसाओ तुमं होसि" ॥२०१॥

'एवं ति होउ' पडिवज्जिऊण जोएइज्जा रहे तुरए ।
ता सत्थिल्लयपुरिसा भणंति एयारिसं वयणं ॥२०२॥

"एएणं मग्गेण अत्थि महंतं अईव कंतारं ।
तस्स य मज्झे चिट्ठइ चोरो दुज्जोहणो चंडो ॥२०३॥

मयमत्तो गलगज्जि कुणमाणो करिवरो य अइविसमो ।
दिट्ठीविसो य सप्पो वग्घो तह दारुणो अत्थि ॥२०४॥

अन्ने वि सावयगणा कूरा मंसासिओ य दुप्पेच्छा ।
एवं नाऊण मणे वच्चसु एएण मग्गेण" ॥२०५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमरेण तओ भणिओ 'मा कुणह भयं पयत्तह पहम्मि।
कुसलेणं संखउरे संपत्ता देमि किं बहुणा' ॥२०६॥

एवं निसामिऊणं अन्ने सत्थिल्लया नरा बहवे।
रायतणएण समयं संचलिया मुक्कभयपसरा ॥२०७॥

एत्थंतरम्मि एगो दीहजडामउडभूसियसरीरो।
भसमुद्धूलियगत्तो तिसूलचक्केण य सणाहो ॥२०८॥

परिचारयपरिचरिओ पत्थियलिंगेण वावडकरग्गो।
तेयंसि सुपसत्थो महव्वइओ तत्थ संपत्तो ॥२०९॥

तेण य भणिओ कुमरो "तुम्ह सुसत्थेण पुत्तय अहं पि।
संखउरे वच्चामि तित्थाणं दंसणनिमित्तं ॥२१०॥

अन्नं च मह समीवे कइ वि हु चिट्ठंति पुत्त दीणारा।
बलिपूयणत्थदिन्ना देवाणं धम्मियनरेहिं ॥२११॥

ते गेण्हेसु महायस वच्चामो जेण निब्भया अम्हे"।
एवं बहु भणिऊणं समप्पिओ दविणनिवहो त्ति ॥२१२॥

ताहे सो परितुट्ठो आसीसं देइ नरवइसुयस्स।
सत्थिल्लएहिं सद्धिं संचलिओ कवडकयवेसो ॥२१३॥

मुणिउं तस्स सरूवं कुमरो चिंतेइ हिययमज्झम्मि।
एएण समं गमणं न सुंदरं होइ परिणामे ॥२१४॥

एवं हियए परिभाविऊण कुमरेण चोइया तुरया।
मग्गे रहो पयट्टो संपत्तो गहणदेसम्मि ॥२१५॥

तेण महव्वइएणं भणिया सत्थिल्लया इमं वयणं।
"अज्ज अहं तुम्हाण पाहुणयं सव्वहा काहं ॥२१६॥

अत्थि इह रण्णमज्झे गोउलमेगं पभूयधणनिवहं।
तत्थ मए वरिसालो आवंतेणं कओ आसि ॥२१७॥

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तम्मि मए गोउलिया सव्वे आवज्जिया नियगुणेहिं ।
दाहिंति अज्ज भोज्जं ता तुम्हे पाहुणा मज्झ" ॥२१८॥

एवं निमंतिऊणं गंतूणं समागओ महावइओ ।
पायसघयदहियाणं भरिऊणं भंडए गरुए ॥२१९॥

आगंतूण य तेणं भणिओ कुमरो वि महुरवयणेहिं ।
'पुत्तय अज्जम्हाणं हिअइच्छियनिव्वुइं कुणसु' ॥२२०॥

कुमरेण तओ भणियं गुरुवियणा मज्झ उत्तमंगम्मि ।
वट्टइ अन्नं च जईण भोयणं कप्पए णेय ॥२२१॥

सत्थेल्लया या सव्वे भणिया कुमरेण दिट्ठिसन्नाए ।
न हु एयं भोत्तव्वं एएण समाणियं भत्तं ॥२२२॥

अवगण्णिऊण कुमरं भुत्तं तं भोयणं विसविमिस्सं ।
भुंजियमेत्ता सव्वे सहसा निच्चेयणा जाया ॥२२३॥

जममंदिरं पवन्ने सव्वे ते जाणिउं महावइओ ।
मेल्लंतो सरनिवहं पहाविओ कुमरवहणत्थं ॥२२४॥

कुमरेण सकोवेणं सरनिवहं वंचिऊण वेएण ।
मम्मपएसे पहओ एगेणं अद्धयंदेणं ॥२२५॥

अह सो महीए पडिओ जीवियसेसो पयंपए एयं ।
"पुत्त अहं दुज्जेओ चोरो दुज्जोहणो नाम ॥२२६॥

निब्भयचित्तेण तए मह चित्तं रंजियं महाभाग ।
जीवियसेसो अहयं संपत्तो बाणघाएणं ॥२२७॥

आयण्णसु मह वयणं एयस्स गिरिस्स वामपासम्मि ।
सरियाण दोण्ह मज्झे देवउलं अत्थि रमणीयं ॥२२८॥

तस्स य पच्छिमभाए तलिणसिला सज्जिया सुजंत्तेणं ।
तं पेल्लिऊण वामे भूमिघरं तत्थ पविसेसु ॥२२९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तस्सत्थि मज्झभाए मम महिला पवररूवगुणकलिया।
नवजोव्वणा विणीया नामेणं जयसिरी सरला ॥२३०॥

रित्थं अइव महंतं चिट्ठइ मज्झम्मि तस्स भवणस्स।
ता तं सव्वं सुपुरिस अप्पायत्तं करेज्जासु ॥२३१॥

मह पुण वट्टइ अंतो गयम्मि जीयम्मि देसु कट्ठाणि"।
एवं सो भणमाणो पंचत्तं पाविओ सहसा ॥२३२॥

दारुसमूहे मेलिय दिन्नो कुमरेण हुयवहो तस्स।
आरुहिउं पवररहं ताव गओ कहियदेसम्मि ॥२३३॥

दो सरियाणं मज्झे देवउले जोइया सिला तेणं।
उग्घाडिऊण दा कओ य सद्दो जहाभणिओ ॥२३४॥

भणइ तओ सा रमणी सहसागंतूण दारदेसम्मि।
कोइलमहुरसरेणं "मज्झे आगच्छ भवणस्स ॥२३५॥

पेच्छेवि तीए रूवं साणंदं जा पलोयए कुमरो।
मयमंजरीइ ताव य अवहत्थेण हओ सहसा ॥२३६॥

भणियं च—

"बंधुपियासहियाओ नयरं गेहं च तुज्झ कज्जेणं।
चत्तं मए अलज्जिर तुमं च अन्नं पसत्तो सि" ॥२३७॥

निसुणेवि तीइ वयणं कुमरो वज्जेवि तं वणं सहसा।
संदणवरमारुहिओ संचलियो अग्गओ ताहे ॥२३८॥

लंघइ जाव सुहेणं केत्तियमेत्तं पि भीसणं रण्णं।
सहस त्ति ताव पेच्छइ नासंतं सवरसंघायं ॥२३९॥

अह पेच्छिऊण कुमरो भयतसिए वणयराण संघाए।
चिंतइ नियचित्तेणं होयव्वं एत्थ मयकरिणा ॥२४०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सासंको हियएणं जाव पलोएइ तद्दिसाहुत्तं ।
ससिसंखकुंदधवलं पेच्छइ ता करिवरं एक्कं ॥२४१॥

पज्झरियमयपवाहं मोडंतं तरुवरे महाकाए ।
मयमंजरी खणेणं उव्विग्गा हिययमज्झम्मि ॥२४२॥

कुमरेण तओ भणियं "मा बीहसु मुद्धि रणकलहाओ ।
गरुयाण संपया आवया य न हु इयरपुरिसाणं ॥२४३॥

एवं भणिऊण पियं अवयरिओ रहवराउ सो तुरियं ।
गंतूणमुत्तरीयं पक्खित्तं झत्ति पुरओ त्ति ॥२४४॥

ताव य सो मायंगो छोहं जा देइ उत्तरिज्जम्मि ।
ता कुमरो वि सुदक्खो झडत्ति आरुहइ खंधम्मि ॥२४५॥

खणमेत्तेणं सो मत्तकरिवरो णेगवणयरकयंतो ।
सवसो कुमरेण कओ अहि व्व मणिमंतजोएण ॥२४६॥

नियदइयाए पुरओ अवइण्णो गयवरस्स खंधाओ ।
पुणरवि रहम्मि रूढो संचलिओ नियपुराहुत्तं ॥२४७॥

जा केत्तियं पएसं कुमरो लंघेइ नियपियासहिओ ।
ता पेच्छइ सो वग्घं अद्धाणतडम्मि उवविट्ठं ॥२४८॥

अद्धसियकेसरसढं अप्फालियवसुहदीहलंगूलं ।
तं पेच्छिऊण कुमरो हसिऊणं धाविओ समुहो ॥२४९॥

सज्जेउं रोद्दकमं वग्घो जा देइ नियकरपहारं ।
वेंटियवत्थो हत्थो छूढो कुमरेण वयणम्मि ॥२५०॥

दाहिणहत्थेण पुणो पहओ असिघेणुयाए खंधम्मि ।
गाढपहारेण हओ धस त्ति महिमंडले पडिओ ॥२५१॥

निज्जिणिऊण य वग्घं जाव य लंघेइ थोवयं गहणं ।
पेच्छइ ताव भुयंगं अद्धाणे संठियं कुमरो ॥२५२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ेरिसं—

अलिउलकज्जलवण्णं फणिमणिकिरणोहभासुरसरीरं।
दोजीहं रत्तच्छं धमणी व पमुक्कफुक्कारं ॥२५३॥

सवडंमुहं उवेंतं दट्ठूणं मयणमंजरी सप्पं।
गुरुभयकंपियदेहा लग्गा कुमरस्स कंठम्मि ॥२५४॥

मा वीहेसु भणंतो उत्तिण्णो संदणाउ सो सुहडो।
आवंतस्स य फणिणो सहसा विहिओ गईथम्भो ॥२५५॥

तो काऊं मुहथंभं खेल्लावेऊण छड्डिओ भुयगो।
आरुहिऊण रहवरं तुरियं संजोइया तुरया ॥२५६॥

किच्छेण लंघिऊणं गहणं तं कहवि नरयसारिच्छं।
संपत्तो संखउरं संतोसियनयरिजणनिवहो ॥२५७॥

वरविहियवत्थसोहाउलम्मि नयरम्मि सुंदरनिवस्स।
जणमणनयणाणंदो दाणं दिंतो पविट्ठो सो ॥२५८॥

नियमंदिरम्मि पत्तो जणजीजणएण गरुयनेहेणं।
आलिंगिओ सहरिसं लोएणं पणमिओ ताहे ॥२५९॥

सो भोयणावसाणे पुट्ठो देसंतराण वुत्तंतं।
तेण समग्गं कहियं जा पत्तो निययभवणम्मि ॥२६०॥

एवं ताणं सुहसंगमेण संजायपरमतोसाणं।
वच्चइ सुहेण कालो रज्जसुहं भुंजमाणाणं ॥२६१॥

अह अन्नया वसंते कामुयलोयाण हियअणंदे।
बहुपउरपरियरजुओ उज्जाणं उवगओ राया ॥२६२।

अह सो वि तओ कुमरो सुहिजणपरिवारिओ पियासहियो।
पुरनारिपलोइयरूवसंपओ तत्थ संपत्तो ॥२६३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुहासतोसवीणाविणोयवरनट्टगेयकव्वेहिं ।
कीलइ पमुइयचित्तो मयमंजरियाए सह कुमरो ॥२६४॥

अवरण्हे सव्वजणो रमिऊणं पुरवरे गओ सिग्घं ।
राया वि सयलपरिवारसंजुओ भवणमणुपत्तो ॥२६५॥

कुमरो वि विसज्जियसयलपरियणो जाव रहवरं पत्तो ।
ता सा मयमंजरिया डक्का उरगेण उग्गेण ॥२६६॥

हाहारव कुणंती डक्का डक्क त्ति तह य विलवंती ।
कंपंतसयलगत्ता पडिया कुमरस्स उच्छंगे ॥२६७॥

कुमरेण तओ भणिया मा मा बीहेहि कुवलयदलच्छि ।
विसहरविसमप्पभवं निमेसमेत्तेण काहामि ॥२६८॥

एवं भणमाणस्स य मुहुत्तमेत्तेण सा पिया तस्स ।
विसमविसपीडियंगा खणेण निच्चेयणा जाया ॥२६९॥

जीवियमुक्क त्ति वियाणिऊण कुमरो वि मोहमावन्नो ।
विलवइ करुणसरेणं हाहाकारे विमुंचंतो ॥२७०॥

कह कह वि हु किच्छेणं अत्ताणं संवरेवि कुमरेणं ।
रइऊण चियं ताहे ठविया उवरम्मि सा भज्जा ॥२७१॥

पज्जालिऊण जलणं अत्ताणं जा खिवेइ सो कुमरो ।
सहस त्ति ताव पत्तं गयणाओ खयरजुयलं ति ॥२७२॥

संपत्तमेत्तएण य भणिओ कुमरो सुकोमलं वयणं ।
किमकारणेण सुपुरिस अत्ताणं खिवसि जलणम्मि ॥२७३॥

अहयं खणमेत्तेण वि सत्थसरीरं करेमि तुह भज्जं ।
एवं पजंपिऊणं पहया अहिमंतियजलेण ॥२७४॥

निद्दाखए व्व बुद्धा अत्ताणं संवरेवि पसयच्छी ।
कयरो इमो पएसो पुच्छंती उट्ठिया झत्ति ॥२७५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तं खयराणं जुयलं उट्ठावेऊण पणइणिं तस्स।
जंपिय कुमरेण समं उप्पइयं गयणमग्गम्मि ॥२७६॥

कुमरो वि पियासहिओ रयणीए अइतमंधपउराए।
पच्चासन्ने देवयउलम्मि सहस च्चिय गओ त्ति ॥२७७॥

कुमरेण एत्थ समए भणिया दइया पसन्नवयणेणं।
आणेमि जाव जलणं ताव तुमं चिट्ठ खणमेण ॥२७८॥

एवं भणिऊण गओ जलणं गहिऊण पुणरवि नियत्तो।
ता पेच्छइ देवउले उज्जोयं मणचमक्कारं ॥२७९॥

संपत्तेणं तेणं भणिया सासंकमाणसेणेवं।
अज्जे दीवुज्जोओ दिट्ठो मे आसि देवउले ॥२८०॥

तीए वि य पडिभणियं पिय तुह हत्थट्ठियस्स जलणस्स।
जलियस्स समुज्जोओ संकंतो सो तुमे दिट्ठो ॥२८१॥

एत्थंतरम्मि खग्गं भज्जाए समप्पिऊण सो कुमरो।
महिनिहियजाणुजुयलो अहोमुहो धमइ जा जलणं ॥२८२॥

ता सहस च्चिय तीए खग्गं हत्थाउ कोसपरिहीणं।
अइगरुयनिहाएणं पडियं देवउलसिलापट्टे ॥२८३॥

संभंतो ता पुच्छइ नियदइयं सो हु सरलसब्भावो।
'किं कोसविप्पमुक्कं खग्गं पडियं महियलम्मि' ॥२८४॥

तीए वि तओ भणिओ 'मह मणमोहो अईव उच्छलिओ।
तेणं परव्वसाए करवालं नवरि पडियं' ति ॥२८५॥

जालेवि तओ जलणं देवउले बोलिऊण सा रयणी।
गोसम्मि नियय भवणे गयाइँ साणंदहिययाइँ ॥२८६॥

बंधवसुहिसयणाणं रयणिपउत्ती य निव्विसेसा सा।
पियसहिएणं कहिया रहसवसुल्लसियहियएणं ॥२८७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं च ताण दोण्ह वि हिययसमोहियविलाससत्ताणं ।
वच्चइ सुहेण कालो विसयसुहं सेवमाणाणं ॥२८८॥
अह अन्नया कयाई सप्पुरिसो रायनंदणो कुमरो ।
विवरीयसिक्खतुरयं परिवाहइ वाहियालीए ॥२८९॥
तो तेण दुट्ठहरिणा उव्वाहरिऊण लोयपच्चक्खं ।
उवणीओ सो रण्णे अइविसमे तावसनिवासे ॥२९०॥
परिभममाणेण तओ पत्तं कुमरेण जिणहरं एक्कं ।
चारणसमणो एगो दिट्ठो बहुमुणिगणाइण्णो ॥२९१॥

सो य केरिसो

गहनक्खत्ताणं ससहरो व्व रयणाण कोत्थुहमणि व्व ।
कप्पदुमो व्व तरूणं देवाणं सहस्सनयणो व्व ॥२९२॥
चंदो व्व सोमयाए महि व्व खंतीए दित्तिए मित्तो ।
रूवेण वम्महो इव निम्मलचउनाणसंपन्नो ॥२९३॥
नामेण साहसगई विज्जावसदिट्ठविस्सववहारो ।
बोहेंतो भवियजणे निम्मलधम्मोवएसेणं ॥२९४॥
गंतूणं कुमरेणं सहसा तो पणमियं चरणकमलं ।
लद्धासीसो य तहा उवविट्ठो तस्स पासम्मि ॥२९५॥
लहिऊण अवसरं तो भणियं कुमरेण विणयपत्तेणं ।
सुहगुरु साहसु मज्झं सकोउओ किं पि पुच्छामि ॥२९६॥
के पहु इमे सुपुरिसा जोव्वणलायण्णरूवपडिहत्था ।
वेरग्गमग्गपडिया पंच वि इच्छंति वयगहणं ॥२९७॥

तओ भणियं नाणिणा—

"अत्थि इह विसयमज्झे चमरी नामेण विसमपल्लि त्ति ।
तं भुज्जइ बलवंतो धरणिधरो नाम भिल्लो त्ति ॥२९८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अह अन्नया कयाई हयगयरहजोहसुहडपरियरिओ।
एगो नरवइकुमरो समागओ तस्स भूमीए ॥२९९॥

तो तेण तस्स सिविरं हयविहयं तक्खणेण काऊणं।
आढत्तो संगामो बलवइणा तेण सरिसो त्ति ॥३००॥

भिडिया महइं वेलं जाव न एगो वि तीरए छलिउं।
तो तेण निययजाया कयसिंगारा कया पुरओ ॥३०१॥

ता तीए उवरि दिट्ठी वम्महहरिएण पेसिया जाव।
छिद्दं लहिऊण तओ कुमरेणं सो हओ मम्मे ॥३०२॥

वहिऊण भिल्लनाहं सो कुमरो पवसिओ पियासहिओ।
एए पुण पंच वि तस्स भायरो आगया तुरियं ॥३०३॥

जीयविमुक्कं दट्ठुं बाणपहारेण भायरं जेट्ठं।
रहमग्गेणं चलिया अमरिसवसफुरफुरंतोट्ठा ॥३०४॥

संखउरम्मि गएहिं दिट्ठो कुमरो कुमारपरियरिओ।
चिट्ठंति तत्थ पंच वि जोयंता मारणे छिड्डं ॥३०५॥

अह अन्नदिणे कुमरो उज्जाणे मुक्कसयलपरिवारो।
नियजायाइ समेओ दिट्ठो सो तेहिं एगागी ॥३०६॥

जा चिंतंति इमं ते वहणोवायं किलिट्ठपरिणामा।
सहस त्ति तस्स जाया दट्ठा दुट्ठेण भुयगेण ॥३०७॥

गयजीयं नाऊणं अप्पाणं जा खिवेइ जलणम्मि।
ता विज्जाहरजुयलं पत्तं सत्थीकया तेण ॥३०८॥

चइऊण तमुज्जाणं पच्चासन्ने गयाइं देवउले।
मोत्तूण तं मयच्छि जलणस्स तओ गओ कुमरो ॥३०९॥

एवं पंच वि पुरिसा लद्धछला गरुयतोसमावन्ना।
वहणकरणुज्जयमणा पच्छन्ना तत्थ चिट्ठंति ॥३१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एयाण कणिट्ठेणं चिरगोवियदीवओ समुग्गाओ।
पयडीकओ य सहसा सुरमंदिरमज्झयारम्मि ॥३११॥

दीवुज्जोएण तओ दिट्ठो बालाइ ताण लहु भाया।
अइनेहनिब्भराए पलोइओ सोमदिट्ठीए ॥३१२॥

ता वुत्तो सो तीए होसु तुमं सुयणु मज्झ भत्तारो।
जइ तं अन्नं झायसि ता से नासेमि जीयं पि ॥३१३॥

तेण पुणो सा भणिया 'मुद्धे इच्छामहं तुमं किं तु।
तुह भत्ता जइ जाणइ न सव्वहा अत्थि मे जीयं' ॥३१४॥

तओ तीए भणियं—

'सुहय अहं नियदइयं वावाइस्सामि तुज्झ पच्चक्खं'।
एवं पजंपिऊणं पईवओ झंपिओ झत्ति ॥३१५॥

एत्थंतरम्मि कुमरो वण्हि घेत्तूण झत्ति संपत्तो।
संपत्तेण भणियं "उज्जोओ इह मए दिट्ठो ॥३१६॥

तीइ तओ भणियमिणं 'तुह करगहियस्स जलियजलणस्स।
देवउले संकंतो पिय उज्जोओ तए दिट्ठो" ॥३१७॥

खग्गं समप्पिऊणं जा सो दीवेइ हुयवयं कुमरो।
ता कड्ढिय करवालं गीवाए मुंचए पहरं ॥३१८॥

एएण करुणमइणा अवहत्थेऊण पाडियं खग्गं।
सिट्ठं सहोयराणं चरियं इत्थीए सुविचित्तं ॥३१९॥

नाऊण तयं तीए विलसियमइदारुणं निरावेक्खं।
वेरग्गसमावन्ना समागया मह समीवम्मि" ॥३२०॥

आयण्णिय नियचरियं संभंतो माणसम्मि सो कुमरो।
परिभावइ "पेच्छ अहो महिलाणं दारुणं चरियं ॥३२१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तो सच्चमेयं—

गंगाए वालुयं सायरे जलं हिमवओ य परिमाणं।
जाणंति बुद्धिमंता महिलाहियय न याणंति" ॥३२२॥
ता धिरत्थु संसारस्स। नत्थि एत्थ किं पि सुहकारणं।

भणियं च—

खणदिट्ठनट्ठविहवे खणपरियट्टंतविविहसुहदुक्खे।
खणसंजोगविओगे संसारे रे सुहं कत्तो ॥३२३॥

एवमाइ भावेंतो संवेगमुवगओ। निवडिऊण त भयवओ चलणेसु भणियं–"भयवं, मम संतियं चरियमेयं। अहं एएसिं भायघायगो। उव्विग्गो य अहं संसारवासाओ ता करेह वयपयाणेण अणुग्गहं।" दिक्खिओ भयवया जाओ दुरणुचरसामण्णपरिपालणुज्जओ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अगडदत्तकथा

शब्दार्थ एवं हिन्दी-अनुवाद

१. जए=संसार में। संखउरं=शंखपुर नाम का नगर। पुरवरं=नगरों में श्रेष्ठ। गुणसमिद्धं=गुणसमृद्ध। राया=राजा। जणजणियतोसओ=जनता में सन्तोष उत्पन्न करने-वाला। सुपसिद्धं=सुप्रसिद्ध।

संसार में सुप्रसिद्ध, गुणसमृद्ध एवं नगरों में श्रेष्ठ शंखपुर नाम का नगर था, जहाँ जनता में सन्तोष उत्पन्न करनेवाला सुन्दर नाम का राजा राज्य करता था।

२. कुलरूवसरिसी=कुल एवं रूप में सदृश। समग्ग-जण-लोयणाणंदा=सभी लोगों की आँखों को आनन्दित (तृप्त करनेवाली। अंतेउरस्स=अन्त:पुर की। पढमा=प्रथम। वरभज्जा=श्रेष्ठ पत्नी।

उस राजा की, कुल एवं रूप में समान, समस्त लोगों की आँखों क आनन्दित (तृप्त) करनेवाली तथा अन्त:पुर में प्रधान सुलसा नामकी श्रेष्ठ पत्नी थी।

३. कुच्छिपसूओ=कुक्षि (कोख) से उत्पन्न। अणुदियहं=रात-दिन। पवरं=श्रेष्ठ। वड्ढंतो=बढ़ता हुआ। जोव्वणं=यौवन। पत्तो=प्राप्त हुआ। केरिसो=कैसा।

उस रानी की कोख से उत्पन्न अगडदत्त नाम का एक पुत्र था। वह प्रतिदिन बढ़ता हुआ युवावस्था को प्राप्त हुआ।

४. धम्मत्थदयारहियो=धर्म, अर्थ और दया से रहित। गुरुवयणविवज्जिओ=गुरु के वचन की अवहेलना करने-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाला। अलियवाई=झूठ बोलनेवाला। पररमणिरमण कामो=दूसरों की स्त्रियों के साथ रमने की इच्छा करने वाला। निस्संको=निडर। मांणसोंडीरो=अत्यन्त घमण्डी।

वह अगडदत्त धर्म, अर्थ और दया से रहित था, गुरु के वचन की अवहेलना करता था, झूठ बोलता था, दूसरों की स्त्रियों के साथ रमण करने की कामना रखनेवाला वह निडर और अत्यन्त घमण्डी था।

५. मज्जं=शराब। पिएइ=पीता था। रमेइ=खेलता था। पिसियं=मांस। महुं=मधु, शहद। भक्खेइ=खाता था। नड=नट, नर्त्तक। चेडय=चेटक। विंद=बृन्द, समूह। परिगओ=परिवेष्टित। पुरमज्झे=नगर के बीच।

वह अगडदत्त शराब पीता था, जूआ खेलता था, मांस और मधु (शहद) खाता था। इतना ही नहीं, वह नट, चेटक और वेश्याओं के साथ नगर के बीच घूमा करता था।

६. अन्नम्मि दिणे=अन्य किसी एक दिन। रन्नो=राजा के लिए, राजा से। वइयरो=घटना। सिट्ठो=कही। जह=जैसा। कुमरेण=कुमार के द्वारा। नराहिवनयरे=राजा के नगर में। असमंजसं=असमंजस। विहियं=किया है।

अन्य किसी एक दिन नगर के लोगों ने राजा से वह घटना इस प्रकार कही कि कुमार अगडदत्त के अशोभनीय कार्यों ने राजा के नगर में असमंजस उत्पन्न कर दिया है।

७. सुणिऊण=सुनकर। पउरवयणं=नागरिकों के वचनों को। गुरुकोवजायरत्तच्छो=अत्यन्त कोध के कारण लाल नेत्रवाला। फुडभिउडिभासुरसिरो=भौंहों को टेढ़ा कर और सिर डरावना बनाकर। समाढत्तो=आरम्भ किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नागरिकों के वचनों को सुनकर अत्यन्त क्रोध के कारण जिनके नेत्र लाल हो गये हैं, ऐसे राजा ने भौंहें टेढ़ी कर और सिर को डरावना बनाकर इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया।

८. भणह=कहो। सिग्घं=शीघ्र। चिय=ही। वज्जिऊण=छोड़कर। मह=मेरे। विसयं=देश को। अन्नत्थ=अन्यत्र। भणसु=कहो।

राजा ने कहा : "अरे, उपस्थित सेवको, अगडदत्त से जाकर कहो कि 'वह शीघ्र ही मेरे देश को छोड़कर चला जाय।' ऐसा न हो कि मैंने जो कहा है, वह उससे न कहो।"

९. नाऊण=जानकर। वइयरं=घटना, प्रसंग। चइऊण=छोड़ कर। रम्मं=रम्य, सुन्दर। खग्गसहाओ=एकमात्र तलवार की सहायता वाला। गुरुमाणपवड्ढियामरिसो=अभिमान की अधिकता से जिसका क्रोध बढ़ गया है।

अभिमान की अधिकता से जिसका क्रोध बढ़ गया है, ऐसा वह कुमार अगडदत्त उस वृत्तान्त को जानकर एकमात्र तलवार के सहारे अपने सुन्दर नगर को छोड़कर चल पड़ा।

१०. लंघित्ता=लाँघकर। गिरिसरिकाणणाइं=पर्वत, नदी, वन आदि को। पुरगोट्ठगामवंदाइं=नगर, गोष्ठ एवं ग्रामों के समूह आदि को। नियनयराओ=अपने नगर से।

वह अगडदत्त पर्वत, नदी, वन, नगर, गोष्ठ, ग्राम आदि को लांघता हुआ अपने नगर से दूर वाराणसी नगरी पहुँचा।

११. तियचच्चरमाईसु=तिराहों और चौराहों पर। असहाओ=असहाय। अमरिसजुत्तो=क्षुब्ध। करि व्व=हाथी के समान। जूहाउ=झुण्ड से। परिभट्ठो=परिभ्रष्ट, पृथक्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

झुण्ड से परिभ्रष्ट हाथी के समान, चित्त से क्षुब्ध वह अगडदत्त वाराणसी नगरी के बीच तिराहों एवं चौराहों पर असहाय होकर घूमने लगा।

१२. हिंडंतेणं=घूमता हुआ। तया=उस समय। मग्गेसु=मार्ग में। रायतणएण=राजपुत्र अगडदत्त ने। एक्को=एक। जाणओ=जानकार।

उसी समय, उस राजपुत्र अगडदत्त ने नगर के रास्ते में घूमते हुए बहुत-से युवकों के साथ एक जानकार को देखा।

१३-१४. सत्थत्थकलाकुसलो=शास्त्र, उसके अर्थ और कला में कुशल विउसो=विद्वान्। भावन्नुओ=मनोवैज्ञानिक। निरओ=लीन। परोवयारे=परोपकार में। किवालुओ=कृपालु। दयालु। वाईणं=प्रतिपक्षियों के लिए। उण=पुनः। सीसाणं=शिष्यों के लिए। संदणहयगयसिक्खं=रथ-संचालन, घोड़ों की चाल, हस्तिसंचालन और हाथियों को वश में करने की शिक्षा देनेवाला। साहितो=शिक्षा देता हुआ। निवसुयाण=राजपुत्रों को।

वह जानकार शास्त्र, उसके अर्थ और कलाओं में निपुण, विद्वान्, मनोवैज्ञानिक, गम्भीर, परोपकार में लीन, दयालु तथा रूप एवं सुन्दर गुणों से युक्त पवनचण्ड नाम से प्रसिद्ध था। वह अपना नाम प्रतिपक्षियों—विरोधियों के साथ सार्थक करता था, न कि शिष्यों के साथ। वह राजकुमारों को रथ-संचालन, घोड़ों की चाल, हस्तिसंचालन और हाथियों को वश में करने की शिक्षा देता हुआ वहाँ रहता था।

१५. समीवम्मि=समीप में। गओ=गया। चरणजुयं=चरण-युगल को। पणमिउं=प्रणाम कर। समासीणो=बैठ गया। कत्तो=कहाँ से। अह=इस प्रकार।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वह अगडदत्त उस जानकार पवनचण्ड मुनि के समीप जाकर तथा उनके दोनों चरणों में प्रणाम कर वहीं बैठ गया। उस जानकार मुनि ने इस प्रकार पूछा : "हे सुन्दर राजकुमार, तुम कहाँ से आये हो ?"

१६. एगंते=एकान्त में। विणिक्खंतो=निकला। वुत्तंतो=वृत्तान्त, घटना। कहिओ=कह दिया।

उस कुमार अगडदत्त ने पवनचण्ड नामक उस जानकार मुनि से एकान्त में जाकर, शंखपुर नगर से जिस प्रकार निकला था, वह समस्त वृत्तान्त कह दिया।

१७. चंडेण=पवनचण्ड ने। अच्छसु=रहो। एत्थं=यहीं। सिक्खंतो=सीखते हुए। अत्तणो=अपना (वृत्तान्त)। गुज्झं=गोपनीय। कस्स=किसी को भी। सुयणु=सज्जन। पयडेसु=प्रकट करना। परं=लेकिन।

उस पवनचण्ड नामक जानकार मुनि ने अगडदत्त से कहा : "सज्जन, तुम कलाओं को सीखते हुए यहीं रहो। लेकिन, अपना यह गोपनीय वृत्तान्त किसी के लिए प्रकट मत करना।

१८. उट्ठेउं=उठा। उज्झाओ=उपाध्याय, गुरु। गेहम्मि=घर में। साहेइ=कहा। महिलियाए=धर्मपत्नी से। भाउयसुओ=भाई का पुत्र, भतीजा।

वह गुरु पवनचण्ड उठा और उस राजपुत्र अगडदत्त के साथ अपने घर पहुँचा। वहाँ उसने अपनी धर्मपत्नी से कहा : "यह मेरा भतीजा है।"

१९. ण्हविऊण=स्नान कराकर। पवर=उत्कृष्ट कोटि के। वत्थं=वस्त्र। भोयणावसाने=भोजन करने के बाद। इणं=यह। भणियं=कहा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस कुमारश्रेष्ठ को स्नान कराकर तथा उत्कृष्ट कोटि के वस्त्र, आभूषण आदि देकर, भोजन के बाद, पवनचण्ड ने उस अगडदत्त से इस प्रकार कहा ।

२०. भवणधणं=मकान एवं धन । सन्दण=रथ । तुरयाइ=घोड़े आदि । संतियं=पास में हैं । मज्झ=मेरे । तुज्झायत्तं=तुम्हारे अधीन । विलससु=उपभोग करो । हियइच्छियं=मन की इच्छा के अनुसार ।

पवनचण्ड ने अगडदत्त से इस प्रकार कहा : "हे कुमार ! भवन, धन, रथ, घोड़े आदि जो भी मेरे पास हैं, उन्हें अपने अधीन समझो और उनका अपने मन की इच्छा के अनुसार उपभोग करो ।"

२१. संतुट्ठमाणसो=सन्तुष्ट मन से । मुक्क=छोड़ दिया । कूर=क्रूर । ववसाओ=व्यवसाय । चिट्ठइ=रहने लगा । सव्वाउ=सभी । किर=निश्चय ही ।

इस प्रकार, उस राजकुमार अगडदत्त ने सन्तुष्ट मन से सभी प्रकार के क्रूर कर्मों को छोड़ दिया और सभी कलाओं को सीखता हुआ उसी के घर में रहने लगा ।

२२. गुरुयण=गुरुजन । पवन्न=संपन्न, युक्त । बावत्तरिं=बहत्तर । गेण्हइ=ग्रहण करने लगा । थेवेण=अल्प, थोड़ा ।

गुरुजनों के प्रति अत्यधिक विनय-गुण से युक्त चित्तवाले तथा सभी व्यक्तियों के मन को आनन्दित करनेवाले उस राजकुमार ने अल्प काल में ही बहत्तर प्रकार की कलाएँ सीख लीं ।

२३. नायकलो=कलाओं को जाननेवाला । परिसम=परिश्रम । कुणेमाणो=करते हुए । भवणुज्जाणे=भवनोद्यान में । घणियं=अत्यधिक ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार कलाओं का ज्ञाता वह कुमार अगडदत्त परिश्रम करते हुए तथा प्रतिदिन अत्यधिक तत्पर रहते हुए उस भवन के उद्यान में रहने लगा।

४. पहाणसेट्ठिस्स=प्रधान सेठ का। वायायण=झरोखा, खिड़की। उतुंग=ऊँचा। वित्थिण्णं=विस्तृत। अईव=अत्यधिक।

उस उद्यान के समीप ही उस नगर के प्रधान सेठ का घर था। उसके अत्यधिक सुन्दर, उन्नत और विस्तृत भवन की खिड़की (उसी उद्यान की ओर खुलती) थी।

५. घरसिरमारूढा=घर की छत पर बैठकर। पेच्छए=देखती थी। सेट्ठिधूया=सेठ की पुत्री।

उस नगरसेठ के मदनमंजरी नाम की एक सुन्दर कन्या थी, जो प्रतिदिन अपने घर की छत पर बैठकर उस कुमार (अगडदत्त) को देखा करती थी।

६. अह=इसके बाद। अणवरयपलोयणं=एकटक देखना। विक्खिवइ=फेंकती थी। लेट्ठुए=कंकड़ी। साणुराया=अनुरागपूर्वक। कुणेमाणी=करती हुई।

उस राजकुमार के प्रति प्रेम में आसक्त होकर वह मदनमंजरी एकचित होकर उसकी ओर देखती हुई तथा उसी का ध्यान करती हुई उसपर फूल, फल, पत्ते और कंकड़ी फेंका करती थी।

७. हिययत्थं=हृदय में स्थित। बालं=कन्या (मदनमंजरी) को। निरिक्खिए=देखता था। कलारसियो=कला का रसिक। विज्जाए=विद्या के।

गुरु की आशंका से और विद्या ग्रहण करने के लोभ से वह राजकुमार अगडदत्त हृदय में स्थित होने पर भी उस कन्या मदनमंजरी की ओर नजर उठाकर देखता तक न था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२८. वम्मह=कामदेव। सरपसर=बाण का प्रसार। विहुरिय मणाए=सन्तप्तचित्त होकर। सत्तो=आसक्त। पहओ= प्रहार किया, फेंका।

अन्य किसी दिन कामदेव के बाण के प्रसार से सन्तप्त होकर उ मदनमंजरी ने कलाओं को ग्रहण करने में संलग्न उस राजकुमार क अशोक का गुच्छा फेंककर मारा।

२९. तणुलया=तनुलता। कंकेल्लिपल्लव=कंकेल्लि-लता के पत्ते। अन्तरिय=छिपी हुई। संभमुब्भंता=लज्जा से भरी हुई। पलोइया=देखी गई। तम्मि दियहे=उसी दिन।

राजकुमार अगडदत्त ने उसी दिन कंकेल्लि-लता के पत्ते के समान काँपती हुई सुन्दर शरीरवाली तथा अत्यन्त लज्जा से भरी हुई उस मदनमंजरी को विशेष दृष्टि से देखा और सोचने लगा :

३०. अमरविलासिणी=देवी। उ अह=और अथवा। होज्ज=है नागकन्न व्व=नागकन्या के समान। कमल व्व=लक्ष्मी के समान। सरस्सइ=सरस्वती। पच्चक्खा=प्रत्यक्ष।

क्या यह कोई देवी है, अथवा नागकन्या? क्या यह लक्ष्मी है, अथवा प्रत्यक्ष सरस्वती ही आ गई है?

३१. अहवा=अथवा, या फिर। कज्जेण=काम से। चिट्ठइ= बैठी है। पुच्छामि=पूछूँ। पयडं=स्पष्ट रूप से।

या फिर, मैं इससे पूछूँ कि यह किस काम से बैठी है?—मन में यह सोचकर वह राजकुमार उससे स्पष्ट रूप से इस प्रकार पूछता है :

३२. का सि=कौन हो। अप्पाणं=अपने को। कीस=क्यों। ईसिं=क्रोध, ईर्ष्या। ममं=मुझपर। खोभेसि=क्षुब्ध हो रही हो। सुयणु=सुन्दर शरीरवाली।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"हे सुन्दर शरीर वाली श्रेष्ठ कन्ये, तुम कौन हो ? विद्या ग्रहण करने में संलग्न मुझपर क्यों अपनी ईर्ष्या एवं क्षोभ प्रकट कर रही हो ?"

३. वियसियदिठ्ठीए=विकसित दृष्टि से। विहसियमुहीए= हँसते हुए मुख से। पयडंतदंतकिरणावलीए=दाँतों की किरणों को प्रकट करती हुई।

उस कुमार अगडदत्त के वचन सुनकर विकसित नेत्रोंवाली उस मदनमंजरी ने हँसी-युक्त मुख से अपने दाँतों की किरणों को प्रकट करते हुए इस प्रकार कहा :

४. नयरपहाणस्स=नगर के प्रधान। सेट्ठिस्स=सेठ की। धूया=पुत्री। विवाहिया=विवाह हुआ है।

"मैं नगर के प्रधान सेठ वन्धुदत्त की कन्या हूँ। मेरा नाम मदनमंजरी है और मेरा विवाह भी इसी नगर में हुआ है।"

५. जद्दिवसाओ=जिस दिन से। कुसुमचावसारिच्छो=कामदेव के समान (सुन्दर)। तद्दियहाओ=उसी दिन से। मज्झं=मेरे। हियए=हृदय में। असुहतरु=दुःख का वृक्ष। वड्ढिओ=बढ़ रहा है।

"हे सुन्दर राजकुमार, कामदेव के समान मोहक तुमको जिस दिन से मैंने देखा है, उसी दिन से मेरे हृदय में दुःख (कामपीडा) का वृक्ष बढ़ रहा है।"

६. निद्दा=निद्रा, नींद। असण=भोजन। उत्तमंगम्मि=सिर में। नट्ठा=नष्ट। लोयणाण=नेत्रों की। गुरुवियणा= अत्यन्त वेदना। रुच्चइ=रुचता है।

"जिससे, मेरी आँखों की नींद समाप्त हो गई है, देह में जलन बढ़ गई है, भोजन भी रुचिकर नहीं लग रहा है तथा सिर में अत्यन्त वेदना हो रही है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३७. ताव च्चिय=तभी तक। सुहं=सुख। जाव=जबतक कि पिओ=प्रिय। पियसंगो=प्रियतम का साथ। अप्पा=अपने को। दुक्खाणं=दुःखों के प्रति। समप्पिओ=समर्पित कर दिया।

"सुख तभी तक मिल सकता है, जबतक किसी प्रियजन के साथ सं नहीं हुआ है। और, जिसने प्रियजन का संग किया, समझो, उस दुःखों के प्रति अपने को समर्पित कर दिया।"

३८. पेरिज्जन्तो=प्रेरित होकर। वराओ=बेचारा। दुल्लह जणाणुराए=दुर्लभ व्यक्ति से अनुराग। पुराकएहि कम्मेहिं=पूर्वकृत कर्मों के फल से। पडइ=पड़ जाता है। सुह मिच्छंतो=सुख की इच्छा रखता हुआ।

"पूर्वजन्म में किये हुए कर्मों से प्रेरित होकर ही कोई बेचारा व्य सुख की इच्छा से दुर्लभ व्यक्ति के अनुराग में पड़ जाता है।"

३९. जीयं=जीवन। जइ=यदि। तरुणिमणहरणं=युवतियों के मन को हरनेवाले। मए=मेरे। समाणं=साथ। संगं=समागम। तुह=तुम्हारे सामने। नियवज्झा=आत्महत्या। जओ फुडं=जिससे स्पष्ट हो जायगा।

"यदि तुम मेरे साथ युवतियों के मन को हरण करनेवाला समागम नहीं करते हो, तो मैं तुम्हारे सामने ही आत्महत्या कर लूँगी औ तब स्पष्ट हो जायगा कि मैं जीवित नहीं हूँ।"

४०. निसुणिऊण=सुनकर। मयण=मदन, कामदेव। महा जलण=भयंकर अग्नि। दड्ढंगी=जले हुए अंगोंवाली।

उस बाला मदनमंजरी के वचनों को सुनकर वह अगडदत्त हृदय में इस प्रकार विचारने लगा: "काम-रूपी भयंकर अग्नि में जले हुए अंगों वाली यह मदनमंजरी अब निश्चय ही मर जायगी।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४१. भारह=महाभारत। सत्थेसु=शास्त्रों में। पयडं=प्रकट रूप में। निसुणिज्जइ=सुना जाता है। कामुयजणाणं=कामुक व्यक्तियों की। कामावत्था=कामावस्था।

"महाभारत, रामायण आदि शास्त्रों में यह स्पष्ट ही सुना जाता है कि कामुक व्यक्तियों की दस काम-अवस्थाएँ होती हैं"

४२. चिंतं=चिन्ता। जणेइ=उत्पन्न करती है। बीयाए=दूसरी। संगमसुहं=संगमसुख की। महइ=अभिलाषा करती है। तइयाए=तीसरी। वत्थाए=अवस्था में। दीहु=दीर्घ। उण्हा=उष्ण। नीसासा=निःश्वास।

"काम की पहली अवस्था चिन्ता उत्पन्न करती है, दूसरी अवस्था में संगमसुख की अभिलाषा होती है और तीसरी अवस्था में दीर्घ और उष्ण निःश्वास चलने लगता है।"

४३. चउत्थी=चौथी। जरयं=ज्वर। डज्झए=जलाती है। छट्ठावत्थाए=छठी अवस्था में। कामिस्स=कामी की।

"काम की चौथी अवस्था में ज्वर उत्पन्न होता है, पाँचवीं अवस्था में शरीर जलने लगता है और छठी अवस्था में कामियों को भोजन रुचिकर नहीं लगता।"

४४. सत्तमियाए=सातवीं। मुच्छा=मूर्च्छा। उम्माओ=उन्माद। पत्तस्स=प्राप्त हुए। पाणाण=प्राणों के।

'काम की सातवीं अवस्था में कामी मूर्च्छित होने लगता है, आठवीं अवस्था में उसे उन्माद हो आता है। जब वह नवीं अवस्था में पहुंचता है, तब असके प्राणों के बचने में भी सन्देह होने लगता है।"

४५. गओ=पहुँचता है। नूणं=निश्चय ही। मुच्चए=त्याग देता है। संसयं काही=संशय में डाल देगी। मह=मेरे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"जब कामी दसवीं अवस्था में पहुँचता है, तब निश्चय ही वह जीवन त्याग देता है। अतः, मेरे विरह में यह मदनमंजरी अपने प्राणों को भी संशय में डाल देगी।"

४६. परिभाविऊण=विचार करके। महुरवयणेण=मधुर वचन से। सिणेहसारं=स्नेह का सार। भणिया=कहा।

भावनाकुशल उस राजकुमार ने अपने हृदय में विचार कर, स्नेह से सनी हुई मधुर वाणी में उस बाला से इस प्रकार कहा :

४७. विउलकित्तिस्स=विपुल कीर्त्तिवाले। पढमसुयं=प्रथम पुत्र। मं=मुझे। वियाणेहि=जानो।

"हे सुन्दरी, सुन्दर आचरण एवं विपुल कीर्त्तिवाले सुन्दर नाम के राजा के प्रथम पुत्र (बड़े लड़के) 'अगडदत्त' के नाम से मुझे जानो।"

४८. कलयायरिय=कलाओं के आचार्य। कलगहणत्थं=कलाओं के ग्रहण के लिए। पविसिस्सं=विशेष रूप से सीख लूँगा। घेत्तुं=साथ लेकर। गमिस्सामि=चला जाऊँगा।

"कलाओं के आचार्य के समीप कलाओं को ग्रहण करने के लिए ही मैं यहाँ आया हूँ। जिस दिन मैं इन कलाओं को विशेष रूप से सीख लूँगा, उसी दिन मैं तुम्हें भी साथ लेकर चला जाऊँगा।"

४९. कह कहवि=जिस किसी प्रकार। मयच्छी, मृगाक्षी, हिरण के समान आँखोंवाली। वम्मह=कामदेव। पसर=प्रसार। सर=बाण। सल्लिय=जर्जर। एमाइ=इस प्रकार के बहुपयारं=बहुत प्रकार से। समासत्था=आश्वस्त।

कामदेव के बाण के प्रसार से जर्जर शरीरवाली उस मृगाक्षी मदनमंजरी को राजकुमार अगडदत्त ने जिस किसी प्रकार बहुत तरह समझाकर आश्वस्त किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५०: रंजियमणो=आसक्तचित्त । नियनिलए=अपने घर में । संपत्तो=आया । संगमोवायं=साथ रहने का उपाय ।

वह राजकुमार अगड़दत्त उस मदनमंजरी के गुण और रूप में आसक्तचित्त होकर तथा उसके साथ रहने का उपाय सोचता हुआ अपने घर आया ।

५१. वाहियाए=गली के । तुरयारूढो=घोड़े पर बैठा हुआ । वच्चइ=जा रहा था । कलयलो=कोलाहल । अवि य= और भी ।

अन्य किसी एक दिन वह राजकुमार अगडदत्त घोड़े पर सवार होकर गली के रास्ते जा रहा था कि उसी समय नगर में कोलाहल मच गया । वह सोचने लगा कि—

५२. चलिउ=चंचल हो उठा है । हुयासणो=अग्नि । घोरो= भयंकर । किं=अथवा रिउसेन्नं=शत्रु की सेना । तडिदंडो=बिजली, वज्र । निवडिओ=गिर पड़ा है ।

"क्या समुद्र में आँधी और तूफान उठ गया है, अथवा क्या भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो उठी है, अथवा क्या शत्रु की सेना ने आक्रमण कर दिया है, अथवा क्या वज्रपात हो गया है ?"

५३. एत्थंतरम्मि=इसी बीच । मत्तो=मदोन्मत्त । मयवारणो= हाथी । निवाडिया=तोड़ दिया । आलाण=खूँटा, खम्भा । वर=मजबूत, श्रेष्ठ ।

इसी बीच आश्चर्यचकित उस राजकुमार ने सहसा देखा कि एक मदोन्मत्त हाथी ने श्रेष्ठ खम्भे के समान अपना खूँटा तोड़ दिया है ।

५४. मिंठेण=महावत से । परिचत्तो=परित्यक्त, छोड़ दिया गया । सोंड़गोयरं=सूँड़ से देखे गये । मारेंतो=मारते हुए । सवडंमुहं=मुँह की सीध में, सम्मुख । कालो=यमराज ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस राजकुमार अगडदत्त ने महावत से रहित सूँड़ की पहुँच तक की वस्तुओं को नष्ट-भ्रष्ट करते हुए तथा अकारण ही यमराज के समान क्रुद्ध हाथी को मुँह की सीध में भागते हुए देखा।

५५. तुट्ट=तोड़ दिया। रज्जू=रस्सी। संचुण्णिय=चूर-चूर कर दिया गया। हट्ट=बाजार। देवउलो=देवालय, मन्दिर। खणमेतेण=क्षणमात्र में ही। पयण्डो=प्रचण्ड। कुमर-पुरओ=कुमार के सम्मुख।

जिसने पैर में बाँधे गये रस्से को तोड़ दिया था तथा घर बाजार एवं मन्दिरों को चूर-चूर कर दिया था, ऐसा वह प्रचण्ड हाथी, क्षणमात्र में ही उस कुमार अगडदत्त के समीप आ पहुँचा।

५६. तारिसरूवधरं=असाधारण सौन्दर्यवाले। दट्ठूण=देखकर। गहिरसरेणं=गम्भीर स्वर से। ओसर=हटो। करिपहाओ=हाथी के रास्ते से।

उस असाधारण सौन्दर्यवाले कुमार अगडदत्त को देखकर नागरिकों ने गम्भीर स्वर से कहा : "हाथी के रास्ते से हटो, हटो।"

५७. परिचइऊण=छोड़कर। सुदक्खगइगमणं=गति (चाल) में अतिशय दक्ष। इंदगइंदस्स=ऐरावत हाथी के। सारिच्छो=समान। गइंदो=गजेन्द्र, गजराज। हक्कारिओ=ललकारा।

कुमार अगडदत्त ने भी हर प्रकार की गति में अतिशय दक्ष अपने घोड़े को छोड़कर ऐरावत हाथी के समान उस गजराज को ललकारा।

५८. सुणिउं=सुनकर। सद्दं=शब्द को, ललकार को। दंती=हाथी। पज्झरिय=झरते हुए। मयजल=मदजल। पवाहो=प्रवाह। तुरिओ=शीघ्र ही। पहाविओ=दौड़ा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिसके गण्डस्थल से मदजल प्रवाहित हो रहा था, ऐसे यमराज के समान क्रुद्ध उस हाथी ने कुमार अगडदत्त की ललकार को सुनकर तत्काल वह उसकी ओर ही झपटा।

९. पाउरणं = चादर को। संवेल्लेऊण = लपेटकर। हिट्ठचित्तेण = प्रसन्न चित से, बिना किसी भय के। सोंडापुरओ = सूँड़ के सामने। पक्खित्तं = फेंका। धावंतवारणस्सा = दौड़ते हुए उस हाथी की।

निर्भीक एवं प्रसन्नचित उस राजकुमार अगडदत्त ने अपनी चादर को लपेटकर झपटते हुए उस हाथी की सूँड़ के आगे फेंका।

१०. कोवेण = गुस्से से। धमधमेंतो = धम-धम की आवाज करता हुआ। दंतच्छोभे = दाँतो की टक्कर। पिट्ठभाए = पृष्ठ-भाग में, पीठ में। पहणइ = मारा। दढ = दृढ। मुट्ठि = घूँसा। पहरेणं = प्रहार से।

वह हाथी गुस्से से धमधम करता हुआ जब गोल की गई चादर पर दाँतों से टक्कर मारने लगा, तभी उस राजकुमार ने भी हाथी की पीठ पर कठोर घूँसे का प्रहार किया।

११. ता = इसके बाद। ओधावइ = औंधा हो गया। खलइ = लड़खड़ाने लगा। परिणओ = करवट बदल ली। परिभमइ = घूमने लगा। चक्कभमणं = चक्र के समान घूमना। रोसेणं = क्रोध से।

तत्काल ही वह हाथी उस राजकुमार अगडदत्त के घूँसे के प्रहार से औंधा हो गया, दौड़ने लगा, चलने लगा, लड़खड़ाने लगा, करवटें बदलने लगा, चक्के के समान घूमने लगा और क्रुद्ध होकर धमधम करने लगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

६२. महंतं=बहुत । वेलं=समय । खेल्लाविऊण=खेला
पवरं=श्रेष्ठ । नियवसे=अपन वश में । काऊणं=करके
आरूढो=चढ़ गया। खंधम्मि=कन्धे पर।

बहुत देर तक उस गजराज को खेलाकर तथा उसे अपने वश करके वह राजकुमार अगडदत्त उसके कन्धे पर सवार हो गया।

६३. गइंदखेडं=हाथी की क्रीडाओं को। सरिसेणं=सहित
नरवरिंदेणं=राजा ने।

इसके वाद, उस हाथी की मनोहर क्रीडाओं को सारे नगर के लो तथा अन्तःपुर की रानियों-सहित राजा ने देखा।

६४-६५. संठिय=बैठे हुए। सुरवइं व=देवों के समान। नि
भिच्चएणं=अपने भृत्य से। एसो=यही। गुणनिही=गु
का खजाना। तेएणं=तेज से। अहिमयरो=सूर्य के समान
सोमत्तणएण=सौम्यभाव (की दृष्टि) से। निसिनाहो
चन्द्रमा। आगम=शास्त्र। वाई=वादी, शास्त्रार्थ में निपु
सूरो=शूरवीर। सुरूवो=अत्यन्त सुन्दर।

हाथी के कन्धे पर बैठे हुए देव के समान सुन्दर उस राजकुमार देखकर राजा ने अपने भृत्य से पूछा : "सूर्य के समान तेज चन्द्रमा के समान सौम्य, समस्त कलाओं और आगमों में कु शास्त्रार्थ में निपुण, शूरवीर और अतिशय रूपवान् यह गुणनि बालक कौन है ?"

६६. मंदिरे=भवन में। कलपरिसमं=कलाओं में परिश्रम
कुणन्तों=करते हुए। नरनाह=हे नरनाथ, राजन्!
तब, नौकरों में से एक ने उत्तर दिया : "हे नरनाथ, कला के मन्दिर में मैंने इसे कलाओं के सीखने में परिश्रम करते देखा है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

७. पुच्छिओ=पूछा। हरिसिएण=हर्षपूर्वक। वरपुरिसो=श्रेष्ठ पुरुष। गयवरसिक्खाओ=हस्तिकला की शिक्षा में।

इसके बाद, राजा ने हर्षित होकर कलाओं के आचार्य से पूछा, : "श्रेष्ठ हाथियों की शिक्षा में अतिकुशल यह श्रेष्ठ पुरुष कौन है ?"

८. अभयं=अभयदान। परिमग्गेउं=माँगकर। कुमरवृत्तांतो=कुमार अगडदत्त का वृतान्त। सविसेसं=विशेष रूप से। परिकहिओ=कहा।

तब, कलाओं के आचार्य ने अभयदान माँगकर अनेक लोगों से घिरे हुए राजा से कुमार अगडदत्त का वृत्तान्त विस्तारपूर्वक कह सुनाया।

९. निसुणिऊण=सुनकर। नियहियए=अपने हृदय में। गरुयतोसमावन्नो=अत्यन्त सन्तोष को प्राप्त। आणेहि=ले आओ। संपेसइ=भेजा। पडिहारं=प्रतिहारी। मम पासं=मेरे पास।

उसे सुनकर अपने हृदय में अत्यन्त सन्तोष को प्राप्त उस राजा ने कुमार अगडदत्त को अपने पास लाने के लिए एक प्रतिहारी को प्रेषित किया।

१०. गयखंधपरिट्ठियओ=हाथी के कन्धे पर बैठा हुआ। दारवालेणं=द्वारपाल ने। हक्कारइ=बुला रहे हैं। रायउलं=राज दरबार में।

उस प्रतिहारी ने हाथी के कन्धे पर बैठे हुए उस कुमार अगडदत्त से इस प्रकार कहा: "हे कुमार, नरनाथ आपको बुला रहे हैं। आप राज दरबार में चलें।"

११. रायाएसेण=राजा के आदेश से। खंभम्मि=खम्भे में। आगलेऊण=बाँधकर। ससंकहियओ=आशंकित हृदय वाला। पत्तो=पहुँचा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तब, हाथी को खम्भे में बाँधकर, राजा की आज्ञा से आशंकि
हृदयवाला वह कुमार अगडदत्त नरनाथ के पास पहुँचा।

७२. जाणुकरुत्तमंगे=घुटना, हाथ एवं माथा। महीए=भूमि
पर। विणिहित्तु=टेककर, रखकर। गरुयविणएणं=
अत्यन्त विनयपूर्वक। जाव=जब। कुणइ=किया। पणामं=
प्रणाम। अवगूढो=गले से लगा लिया।

अत्यन्त विनय के साथ कुमार अगडदत्त पृथ्वी पर झुककर तथा घुट
टेककर जब राजा को प्रणाम भी नहीं कर पाया था कि राजा ने उ
अपने गले से लगा लिया।

७३. तंबोल=पान। आसण=आसन। संमाण=सम्मान। दाण=
दान, भेंट। पूइओ=सत्कार किया। अहियं=अधिक
उवविट्ठो=बैठ गया।

पान, आसन, सम्मान, दान, पूजा आदि से अत्यधिक सम्मानि
कुमार अगडदत्त प्रसन्न हृदय से राजा के पास बैठ गया।

इसके अनन्तर राजा ने सोचा : "यह तो निश्चय ही कोई उत्त
पुरुष है।" क्योंकि—

७४. विणओ=विनय। मूलं=मूलं। सिरीए=लक्ष्मी का
ववसाओ=व्यवसाय। दप्पो=दर्प। सुहाण=सुखों का।
"उत्तम पुरुषों का मूल विनय है, लक्ष्मी का मूल व्यवसाय है, सुख
का मूल धर्म है और विनाश का मूल घमण्ड है।"

७५. को=कौन। चित्तेइ=चित्रित करता है। मऊरं=मोर को
गइं=गति को। रायहंसाणं=राजहंस की। कुवलयाणं=
कमलों के। कुलप्पसूयाणं=अच्छे कुल में उत्पन्न होने
वालों के।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मयूरों (के पंखों) को कौन चित्रित करता है ? राजहंसों की गति को कौन सुन्दर बनाता है ? कमल-पुष्पों को कौन सुगन्धित करता है और उच्च कुल में उत्पन्न व्यक्तियों को विनयशील कौन बनाता है ?

७६. साली=धान। भरेण=भार से। तोएण=जल से। जलहरा= मेघ। तरुसिहरा=वृक्षों के शिखर। विणएण=विनय से। सप्पुरिसा=सत्पुरुष, सज्जन पुरुष। भएण=भय से।

और भी, धान अपने ही भार से झुक जाता है। मेघ जल के भार से झुक जाते हैं। वृक्ष के शिखर अपने फलों के भार से झुक जाते हैं और सज्जन व्यक्ति अपने विनय-गुण के कारण झुकते हैं। वे किसी के भी भय से नहीं झुकते।"

७७. तो=उसके बाद। विणयरंजिएण=विनय-गुण से प्रसन्न होकर। कुसलपउत्तीउ=कुशल-समाचार। रन्ना=राजा ने। सविसेसं=विस्तारपूर्वक। पुट्ठं=पूछा।

उसके बाद, कुमार अगडदत्त की विनम्रता से प्रसन्न होकर राजा ने उससे कुशल-समाचार पूछा। तत्पश्चात् उसने उससे कलाग्रहण-सम्बन्धी बातें विस्तारपूर्वक पूछीं।

७८. नियगुणगहणं=अपने द्वारा गुणों के ग्रहण-सम्बन्धी बातों को। पयडेइ=प्रकट किया। उज्झाएण=उपाध्याय ने, गुरु ने। निउणो=निपुण।

जब लज्जा के कारण कुमार अगडदत्त अपने गुण-सम्बन्धी बातों को राजा से न कह सका, तब उसके गुरु (पवनचण्ड) ने कहा : "हे प्रभु, यह समस्त कलाओं में निपुण है।"

७९. नियगरुयपयावपसंसणेण=अपने महान् प्रताप की प्रशंसा से। जे=जो। महासत्ता=महापराक्रमी। इयरा=इतर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अलियपसंसणे=झूठी प्रशंसा में। न मायंति=फूले नहीं समाते।

"परन्तु, महाराज! जो महाशक्तिशाली पुरुष हैं, वे अपने महान् प्रताप की प्रशंसा से लज्जित होते हैं। लेकिन, इतर (असज्जन) पुरुष अपनी झूठी प्रशंसा से भी फूले नहीं समाते।"

८०. एवं=इस प्रकार। कुमारचरियम्मि=कुमार अगडदत्त के चरित से। खित्तचित्तस्स रन्नो=आकृष्टचित्त राजा के। सयलो=समस्त। पुरलोओ=नगर के लोग। समागओ=आये।

इस प्रकार, उस कुमार अगडदत्त के चरित से आकृष्ट चित्तवाले राजा के पास नगर के सभी लोग आये।

८१. वररयणअंबराइं=उत्तम रत्न, वस्त्र आदि। सुयंध-कुसुमाइं=सुगन्धित पुष्प आदि। सणाह=सहित। मुक्काइं=भेंट में दिये। परिहवगएणं=पराभव को प्राप्त।

पराभव को प्राप्त (चोरों से उपद्रुत) नागरिकों ने श्रेष्ठ रत्न, वस्त्र आदि तथा फल-सहित सुगन्धित पुष्प राजा को भेंट में दिये।

८२. तं=उस। पुरजणकोसल्लं=नागरिकों द्वारा दी गई भेंट को। अप्पियं=अर्पित कर दिया। कयपणिवाया=प्रणाम कर; हाथ जोड़कर। विन्नत्ति=विनती।

नागरिकों द्वारा दी गई उस भेंट को राजा ने कुमार अगडदत्त को अर्पित कर दिया। इसके बाद उन नागरिकों ने हाथ जोड़कर विनती की।

८३. तुह=तुम्हारा, आपका। कुबेरपुरविहवअहियधणनिवहं=कुबेर की नगरी के वैभव से भी अधिक धनसमूह। कइवयदिणाण=कुछ ही दिनों में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

5262

"हे राजन्, कुबेरपुरी के वैभव से भी अधिक धन से पूर्ण आपका यह नगर कुछ दिनों से चोरों का निवासस्थान (अड्डा) बन गया है।"

८४. केणावि=किसी भी। तक्करेणं=चोर ने। खत्तचारनिउणेणं=सेंध मारने में निपुण। एण्हि=इस समय, सम्प्रति। मुट्ठं=चुरा लिया।

"(हे राजन्,) सेंध लगाने में चतुर किसी दुष्ट चोर ने इस नगर को लूट लिया है। सम्प्रति, उससे हमारी रक्षा कीजिए। इससे अधिक और क्या कहें?"

८५. कडुयवयणेहिं=कटुवचनों द्वारा। आरक्खिओ=आरक्षी, कोतवाल को। पुरवरस्स=नगर के। रे रे=अरे। पेच्छंतस्स=देखते-देखते। मुट्ठं=चुरा लिया।

राजा ने कटुवचनों द्वारा नगर के आरक्षी को डाँटा और कहा: "अरे, तुम्हारे देखते-देखते यह समस्त नगर ही लूट लिया गया है?"

८६. अह=उसके बाद। विन्नत्तं=निवेदन किया। अणेगाणि=अनेक। अम्ह=हम। दियहाणि=दिनों से। जोयंताणं=खोजते हुए।

तब उन आरक्षियों ने निवेदन किया: 'हे देव, हम कई दिनों से चोर को खोज रहे हैं, लेकिन वह कहीं भी दिखाई नहीं दे रहा है।"

८७. एत्थंतरम्मि=इसी बीच में। पहु=प्रभो, राजन्! देहि ममाएसं=मुझे आदेश दें। लहेमि=खोज लूँगा। सिग्घं=शीघ्र।

इसी बीच अगडदत्त ने राजा से निवेदन किया: "हे प्रभो, मुझे आज्ञा दें, मैं शीघ्र ही नगर के चोर को खोज लूँगा।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८८. मज्झे=मध्य। सत्तदिणाणं=सात दिनों के। पुरचोरं=नगर के चोर को। नाह=नाथ! जलियजलणजालावलीसु=जलती हुई अग्नि की ज्वाला में। जालेमि=जला दूंगा।

"हे नाथ, यदि सात दिनों के मध्य, मैं नगर के चोर को नहीं प्रा करूंगा, तो जलती हुई अग्नि की ज्वाला में अपनी देह को जला दूं (आत्मदाह कर लूंगा)।"

८९. एयं=इस प्रकार। सपइन्नं=प्रतिज्ञा-सहित। अणुमन्निऊण=मानकर। सिज्झेउ=सफल हो। समीहियं=इच्छित।

इस प्रकार कुमार अगडदत्त के प्रतिज्ञा-सहित वचन को सुन राजा ने उसे स्वीकार किया और कहा—"तुम्हारा इच्छित क सफल हो।"

९०. गहियपइन्नो=प्रतिज्ञा लेकर। अणुव्विग्गो=बिना उद्वि हुए। परिभमइ=घूमने लगा। जोयंतो=देखता हुआ।

इसके अनन्तर, प्रतिज्ञा ग्रहण कर कुमार अगडदत्त ने राजा को प्र किया और अनुद्विग्न भाव से चोरो के अड्डों को खोजता हुआ नगर बीच घूमने लगा।

९१-९२. वेसाण=वेश्याओं के। मंदिरेसु=भवनों में। पाण गारेसु=मदिरालयों में। जूयठाणेसु=जूआ खेलने के अ पर। कुल्लूरियावणेसु=हलवाइयों एवं विश्रामाग (होटलों) में। उज्जाणनिवाणसालासु=उद्यानों और शालाओं में। मढसुन्नदेवलेसु=मठों तथा सुनसान देवाल में। चच्चर-चउहट्ट-सालासु=चौराहों, चौराहों की दूक के प्रांगणों में—(सन्दिग्ध) दूकानों एवं धर्मशालाओं हिंडइ=भटकने लगा। एकल्लओ=अकेला।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमार अगडदत्त वेश्याओं के भवनों में, शराबखानों में, जूआ खेलने के अड्डों पर, हलवाइयों की दूकानों एवं विश्रामागारों में उद्यानों और मठों में, शून्य देवालयों में, चौराहों, चौराहों की दूकानों के प्रांगणों, सन्दिग्ध दूकानों एवं धर्मशालाओं में चोर की गतिविधि देखता हुआ भटकने लगा।

९३. ता=तब। जा=जब। दियहो=दिन। वोलीणो=व्यतीत हो गया। दिट्ठो=दिखाई दिया। चिंताए गहिओ=चिन्ता से ग्रस्त हो गया।

जब छह दिन व्यतीत हो गये, फिर भी चोर कहीं-नहीं दिखाई दिया, तब सातवें दिन कुमार अगडदत्त विशेष रूप से चिन्ताग्रस्त हो गया।

९४. किं=क्या। वच्चामि=चला जाऊँ। तायस्स=पिता के। अंतियं=पास। जामि=चला जाऊँ। हरिऊण=हरकर। मयच्छि=मृगाक्षी को। रण्णम्मि=जंगल में।

"क्या मैं विदेश चला जाऊँ, अथवा क्या मैं पिताजी के पास चला जाऊँ, अथवा क्या उस मृगाक्षी (मदनमंजरी) को हरकर वन में चला जाऊँ ?"

९५. जुत्तं=उचित। निम्मलकुलसंभवाण=निर्मल कुल में उत्पन्न। किर=निश्चय। नियजीहाए= अपनी जीभ (मुख) से। पडिवन्नं=की गई प्रतिज्ञा। अन्नहा=अन्यथा (झूठ)।

"किन्तु, निर्मल कुल में उत्पन्न पुरुषों के लिए यह उचित नहीं कि अपने ही मुख से की गई उसकी प्रतिज्ञा झूठी हो जाय।"

९६. जेण = जिससे। छिज्जउ=कट जाय। सीसं=गरदन। अह= अथवा। होउ=हो जाय। बंधण=बन्धन। वयउ=चली

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाय। पडिवन्नपालणे=प्रतिज्ञा के पालन में। होउ=हो जाय।

"भले ही सिर कट जाय अथवा बन्धन में ही बँधना पड़े, अथवा पूरी लक्ष्मी ही चली जाय, चाहे जो कुछ भी हो जाय, सज्जन पुरुष (हर हालत में) अपनी प्रतिज्ञा का पालन करते ही हैं।"

९७. नेयं=यह नहीं। महव्वयं=महाव्रत। नरट्ठिमुद्दाए=मनुष्याकृति में अस्थिपंजर-मात्र। समुव्वहणं=धारण करना

"मनुष्याकृति में अस्थिपंजर-मात्र धारण करने से ही महाव्रत का पालन नहीं हो जाता, धीर पुरुषों के लिए तो प्रतिज्ञा का पालन करना ही महाव्रत है।"

९८. बहुवियप्पे=बहुत प्रकार के विकल्प। निययमणे=अपने मन में। अवरण्हवेलाए=अपराह्णकाल में। भाविऊण=सोचकर।

इस प्रकार, अपने मन में बहुत प्रकार के विकल्प करता हुआ वह कुमार अगडदत्त अपराह्णकाल में नगर के बाहर आया।

९९-१००. एग=एक। पवर=उत्तम। किसलय=नई कोंपलें। समूह=गुच्छा। गुविल=सघन। सहयाररुक्ख=आम्रवृक्ष। उत्तुंगवियडसाहाउलं=ऊँची विस्तृत शाखाओं से व्याप्त। हेट्ठयम्मि=नीचे। सुढियंगो=श्रान्तशरीर। विज्जाभट्ठो=विद्या से भ्रष्ट। खयरिंदो=विद्याधरों का राजा।

(कुमार अगडदत्त) उत्तम नई कोंपलों के गुच्छों से सघन, ऊँची विस्तृत शाखाओं से व्याप्त आम्रवृक्ष की शीतल छाया के नीचे विद्या से भ्रष्ट विद्याधर नरेश के समान दिशाओं की ओर देखता हुआ श्रान्त-शरीर चिन्तामग्न बैठा था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

०१· एत्थंतरम्मि=इसी बीच। परिवायगो=परिव्राजक, संन्यासी। समणुपत्तो=आया, पहुँचा। कयधाउवत्थवेसो=गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए। मुंडियसिरकुच्च=सिर और दाढी मुड़ाये। सच्चूलो=चोटी-सहित।

इसी बीच, अचानक ही, गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए, सिर और दाढ़ी मुड़ाये तथा चोटी धारण किये एक परिव्राजक वहाँ आया।

२· दंडत्तिय=त्रिदण्ड। कुंडी=कमण्डलु। संगओ=सहित। गणेत्तिया=रुद्राक्ष की माला। मुणमुणिंत्तो=गुनगुनाता हुआ। संपत्तो=आया।

त्रिदण्ड, कमण्डलु और चमर के साथ रुद्राक्ष की माला हाथ में लिये हुए, कुछ गुनगुनाता हुआ वह परिव्राजक कुमार अगडदत्त के समीप आया।

३-१०४· करिसोंडाभुयदंडो=हाथी की सूँड़ के समान भुजदण्ड-वाला। फरुसकेसो=रूखे बालवाला। रउद्दो=रौद्र। रत्तच्छो=लाल आँखोंवाला। दीहजंघो=लम्बे पैरोंवाला (जंघा=घुटने से टखने के बीच का अंग) निज्झाइऊण=देखकर। हविज्ज=होना चाहिए। फुडं=निश्चय ही।

हाथी की सूँड़ के समान जिसके भुजदण्ड थे, विशाल वक्षःस्थल था, रूखे बाल थे, लाल नेत्र और लम्बे पैर थे तथा जो नवयुवक और देखने में भयंकर था, ऐसे उस परिव्राजक को देखकर कुमार अगडदत्त ने आशंकित होकर मन में विचार किया : "इस प्रकार के रूप से तो इसे निश्चय ही चोर होना चाहिए।"

५· पिएहि वयणेहिं=प्रिय वाणी से। कत्तो=कहाँ से। केण=किस। व=और। कज्जेण=काम से। चिट्ठेसि=बैठे हो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसी बीच, उस परिव्राजक ने कुमार अगडदत्त से प्रिय वाणी में पूछा : 'हे सज्जन, तुम कहाँ से आये हो और यहाँ किस काम से बैठे हो ?"

१०६. नाऊण=जानकर। बुद्धिनिउणेण=बुद्धिनिपुण ने। भमामि=घूम रहा हूँ। दालिद्दे णक्कंतो=दरिद्रता से पीडित होकर सुन्नमणो=शून्य मन।

उस परिव्राजक के मनोभाव को जानकर बुद्धिनिपुण अगडदत्त ने कहा : "मैं दरिद्रता से पीडित होकर शून्य मन से नगर में भटक रहा हूँ।"

१०७. मा=मत। सोयसु=शोक करो। अज्जं=आज। छिंदामि=नष्ट कर देता हूँ। देमि=देता हूँ।

तब, उस परिव्राजक ने कहा : "हे पुत्र, तुम शोक मत करो। मैं आज ही तुम्हारी दरिद्रता दूर कर इच्छित द्रव्य देता हूँ।

१०८. संलत्तं=कहा। पयपसाएणं=चरणों की कृपा से। संपज्जइ=होगा। ईहियं=इच्छित। कज्जं=कार्य, प्रयोजन।

तब कुमार अगडदत्त ने कहा : "आपके ही चरणों की कृपा से मेरी दरिद्रता नष्ट हो जायगी और मेरा इच्छित प्रयोजन भी पूरा होगा।"

१०९. जंपंताणं=कहते हुए। नयणपहं=दृष्टिपथ को। वज्जिऊणं=छोड़कर। दिवसयरो=सूर्य। अद्दंसणमावन्नो=अदृश्य हो गया।

इस प्रकार वातचीत करते हुए उन दोनों की आँखों से सूर्य उसी प्रकार अदृश्य हो गया, जिस प्रकार सज्जन पुरुष पापों के भय से दूर भाग जाता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१०. संज्झुज्जोयम्मि गए=सन्ध्याकालीन प्रकाश के मिटते ही। पयडीहूयम्मि=प्रकट होने पर। रयणितमनियरे=रात्रि का अन्धकार-समूह। कोसाओ=म्यान से। कड्ढेउं=निकालकर, काढ़कर। दारुणायारं=भयंकर आकारवाला।

सन्ध्याकालीन प्रकाश के समाप्त होने पर तथा रात्रि के अन्धकार-समूह के प्रकट होने पर उस परिव्राजक ने म्यान से भयंकर आकार-वाली तलवार निकाली।

११. तुरियगइ=शीघ्रगति से। संचलिओ=चला। एहि=आओ। पिट्ठं=पीछे। समीहियकज्जं=इच्छित कार्य। कारेमि=करूँ। बहुणा=अधिक।

शीघ्र गति से चलते हुए उस परिव्राजक ने कुमार अगडदत्त से कहा: "मेरे पीछे आओ, जिससे तुम्हारा समस्त इच्छित कार्य कर दूँ। अधिक क्या कहूँ?"

१२. ताव=तभी। दोन्नि=दोनों ही। सिग्घं=शीघ्र। संपत्ता=पहुँचे। नयरिमज्झयारम्मि=नगर के मध्य में। थोवं=थोड़ा। एगदेसम्मि=एक जगह।

तब, ये दोनों (परिव्राजक और अगडदत्त) शीघ्र ही नगर के बीच पहुँचे और थोड़ा घूम-घामकर एक स्थान पर बैठ गये।

१३. ईसरवणियस्स=धनी बनिये के। मंदिरे=भवन में। तुंगे=विशाल, ऊँचे। सुहभेयभित्तिभाए=आसानी से खोदने योग्य दीवार के हिस्से में। खत्तं=सेंध (के आकार की)। आलेहियं=लकीर बनाई।

तब उस परिव्राजक ने एक धनी व्यापारी के भवन में आसानी से खोदने योग्य दीवार के हिस्से में सेंध लगाने के लिए लकीर बनाई।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

११४. जोएवि=देखकर। भित्तिसंधि=दीवार की जोड़ को। खणियं=खोदी। सुतिक्खसत्थेण=नुकीले हथियार से। सिरिवच्छसच्छय=श्रीवत्स-चिह्न के समान। सुप्पवेस-निग्गमणं=आसानी से घुसने और निकलने योग्य। अइगूढं=बहुत चुपके।

दीवार की जोड़ को देखकर उस परिव्राजक ने तेज हथियार से बहुत चुपके और आसानी से प्रवेश और निर्गमन के योग्य श्रीवत्स-चिह्न के आकार की सेंध खोदी।

११५. निज्झाइऊण=विचारकर, देखभालकर। सुइरं=अच्छी तरह, देर तक। निहुयपयं=चुपके से पैर बढ़ाकर। धुत्तो=धूर्त।

अच्छी तरह देख-भालकर वह धूर्त परिव्राजक धीरे-धीरे पैरों को बढ़ाकर उस सेंध के भीतर प्रविष्ट हुआ और वहाँ (भवन) से बहुमूल्य (रत्नों से भरे) घड़ों और अनेक पेटिकाओं को निकाल लाया।

११६. ठविउं=ठहराकर। आणिय=लाकर। देवउलाओ=देव मन्दिर से। दरिद्दए=दरिद्र। गेण्हाविय=उठवाकर। निग्गया=निकल गया। झत्ति=झटपट।

राजकुमार अगडदत्त को वहीं ठहराकर तथा देव मन्दिर से बहुत-से दरिद्र (मजदूर) पुरुषों को बुलाकर और उनसे चुराया हुआ समान उठवाकर वह परिव्राजक झटपट उस नगर से बाहर निकल गया।

११७. आयड्ढिऊण=निकालकर। खग्गं=तलवार। पहणामि=मार डालूँ। दुट्ठं=दुष्ट को। अहव=अथवा। जुत्तं=उचित। छलघाओ=छलपूर्वक मारना। कुलपसूयाणं=अच्छे कुल में उत्पन्न पुरुषों के।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसके अनन्तर, कुमार अगडदत्त ने सोचा : "क्या मैं इस दुष्ट को तलवार निकालकर छल से मार डालूँ ? अथवा, छल से मारना मुझ जैसे श्रेष्ठ कुल में उप्पन्न पुरुषों के लिए उचित नहीं ? "

१८. एयनिवासं=इसके स्थान को। गंतुं=जाकर। केत्तियं=कितना। हरियं=चुराया है। कए=लिए। अणवरयं=बराबर। मुसइ=चुराता है।

"इसके निवास को जाकर यह देखूँ कि इसने कितना धन चुराया है और, यह भी जानूँ कि यह बराबर किसके लिए नागरिकों की सम्पत्तियों को चुराता है ? "

१९. दोन्नि=दोनों। गहियमोसया=चुराई हुई सामग्री को लेकर। निक्खंता=बाहर निकले। किलंता=थककर। नयरुज्जाणम्मि=नगर के उद्यान में।

इस प्रकार, वे दोनों (परिव्राजक और अगडदत्त) चुराये हुए धन को लेकर उस श्रेष्ठ नगर से बाहर निकले और अत्यन्त भार के कारण थके हुए वे नगर के उद्यान में जा पहुँचे।

२०. छलघायमारणनिमित्तं=छल से मार डालने के निमित्त। गरुया=बहुत अधिक। रयणी=रात्रि। अच्छामो=रहें, विश्राम करें। एत्थ=यहीं

परिव्राजक ने कुमार को छल से मार डालने के निमित्त उससे कहा : "हे सत्पुरुष, रात्रि बहुत हो गई है। अतः, हम यहीं बगीचे में विश्राम करें।"

२१. पडिवन्ने=स्वीकार करने पर। तत्थुज्जाणम्मि=उसी उद्यान में। समासीणा=ठहर गये। किल=निश्चय ही।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजकुमार अगडदत्त द्वारा स्वीकार करने पर वे सभी "अब हम निश्चिन्त होकर यहीं सो जायँ" यह विचार कर वहीं ठहर गये। यद्यपि दोनों ही (परिव्राजक एवं अगडदत्त) अपने मन में आशंकित (सशंकित) थे।

१२२. खणमेत्तेणं=क्षणमात्र में ही। दाहिणवामेसु=दायें-बायें। वच्छमूलस्स=पेड़ के नीचे। अन्नोन्नघायनिरया=एक दूसरे को मारने की घात में। अलियनिद्दाइ=झूठी नींद में।

क्षणमात्र में ही उन दोनों (परिव्राजक और अगडदत्त) ने एक-दूसरे को मारने के निमित्त पेड़ के नीचे, (पेड़ के) दायें और बायें झूठ-मूठ ही सोने का वहाना किया।

१२३. वाहित्तयपुरिसा=मजदूर पुरुष। वीसत्थमाणसा=विश्वस्त-मन से। सत्थराओ=बिस्तर से। उट्ठेत्ता=उठकर। सणियमवक्कंतो=धीरे से खिसक गया।

वे सभी सामान ढोनेवाले पुरुष मन से विश्वस्त होकर सो गये। कुमार अगडदत्त भी विस्तर से उठकर धीरे से दूसरी ओर खिसक गया।

१२४. काउं=करके। करम्मि=हाथ में। अन्नस्स=दूसरे। महातरुस्स=बड़े वृक्ष के। मूलम्मि=नीचे, तले। पेच्छं=देखता हुआ। अपमत्तो=सावधानी से, प्रमादरहित होकर। चरियाइं=गतिविधि।

वह कुमार अगडदत्त हाथ में तलवार लेकर, किसी दूसरे विशाल वृक्ष के नीचे जाकर सावधानी से उस परिव्राजक की गतिविधि को देखता हुआ छिपकर बैठ गया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१२५. सुत्त=सोए हुए हैं। मुणेऊणं=जानकर। विणिवाइया=मार डाला। सयणे=बिस्तर पर। तमपेच्छंतो=उसे न देखता हुआ। जोवइ=खोजता है, जोहता है।

'सोये हुए हैं', ऐसा जानकर उस परिव्राजक ने उन मजदूर पुरुषों को मार डाला। इसके अनन्तर, वह कुमार अगडदत्त को शय्या पर न देखता हुआ उसे खोजने लगा।

१२६. ता=तब। हक्किऊण=ललकार कर। दुट्ठं=दुष्ट को। करवालं=तलवार को। आयड्ढिऊण=निकालकर। पहणइ=मारा। जंघासन्नं=जंघा (पैर) के पास। भीम-बलजुत्तो=अत्यन्त बल से युक्त।

भयरहित और अत्यन्त बली कुमार अगडदत्त ने उस दुष्ट परिव्राजक को ललकारा और तलवार निकालकर उसकी जंघा (पैर) के निकट प्रहार किया।

१२७. एगेण पहारेणं=एक ही प्रहार से। पडियं=गिर पड़ा। जुयलयं=दोनों। चक्काहओ व्व=भयानक आँधी से आहत के समान। रुक्खो=वृक्ष।

एक ही प्रहार से उस परिव्राजक की दोनों जंघाएँ (पैर) टूटकर गिर पडीं और वह परिव्राजक भी भयंकर आँधी से आहत वृक्ष के समान तत्क्षण पृथ्वी पर गिर पड़ा।

१२८. असमत्थेणं=असमर्थ। जीवियसेसेण=जीवन की शेष अवस्था में। आसि=हूँ। भुयंगमो=भुजंगम।

उठकर चलने में असमर्थ, मरणोन्मुख उस परिव्राजक ने कुमार अगडदत्त से इस प्रकार कहा: "मैं सुप्रसिद्ध भुजंगम नाम का चोर हूँ।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१२९. तह=तथा। अत्थि=है। इह मसाणे=इसी श्मशान में। भूमीए मज्झयारम्मि=भूमि के बीच में। मज्झ=मेरी। भइणी=बहन। जुवइ=युवति।

"इसी श्मशान में, भूमि के मध्य, तलगृह में वीरमती नाम की मेरी युवती बहन रहती है।"

१३०. कुणसु=करना। वाहरणं=बुलाना। दारं=द्वार। उग्घाडए=खोल दे। तुरयं=शीघ्र ही।

"फिर, तुम वटवृक्ष के नीचे जाकर उस वीरमती को आवाज देना, जिससे कि वह शीघ्र आकर तलगृह का दरवाजा खोल दे।"

१३१. परिणिऊण=विवाह कर। गेण्हसु=ले लेना। दविणजायं=धन-सम्पत्ति। चिट्ठसु=रहना। सुहेणं=सुखपूर्वक। वसिमम्मि=निवास पर।

"हे सुन्दर राजकुमार, तुम उससे विवाह कर और समस्त धन-सम्पत्ति लेकर या तो वहीं सुखपूर्वक रहना, अथवा अपने निवासस्थान (घर) चले जाना।"

१३२. जंपंतो=कहते हुए। कुमरेण आसासिओ=कुमार अगडदत्त ने आश्वासन दिया। पेयभूमीए=प्रेतभूमि में।

इस प्रकार कहते हुए उस परिव्राजक को कुमार अगडदत्त ने एक क्षण के लिए आश्वस्त किया, फिर वह (अगडदत्त) उसकी तलवार लेकर उस प्रेतभूमि में जा पहुँचा।

१३३. कओ=किया। सद्दो=शब्द। तीए=उसने। वडस्स=बरगद के। आगंतूण=आकर। उग्घाडियं=खोल दिया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अगडदत्त ने प्रेतभूमि में स्थित वटवृक्ष के नीचे जाकर उस युवती (वीरमती) को पुकारा। उसने भी आकर घर का दरवाजा खोल दिया।

३४ निज्झाइऊण=देखकर। सुइरं=देर तक। रूवं=सौन्दर्यं। विम्हिओ=विस्मित। चिंतइ=विचार किया। नियहियएणं अपने मन में। मयणस्स सव्वस्सं=कामदेव का सर्वस्व।

उस बाला वीरमती के रूप को देर तक देखकर वह अगडदत्त सहसा विस्मित हो उठा और अपने हृदय में विचारने लगा कि "यह तो कामदेव का सर्वस्व है।"

३५ पुट्ठो=पूछा। तीए=उसने। कत्तो=कहाँ से। कज्जेण=कार्य से। आयाओ=आये हो। पउत्ती=वृत्तान्त। सोउं=सुनकर। दूमिया हियए=मन में दुःखी हो उठी।

उस वीरमती ने पूछा: "हे सुन्दर राजकुमार, तुम कहाँ से और किस कार्य से आये हो?" तब, अगडदत्त ने उसे सारा समाचार कह सुनाया, जिसे सुनकर वह मन में दुःखी हो उठी।

३६. भणिऊण=कहकर। महुरवयणं=मधुर वचन। नीओ=ले आई। पायालमंदिरे=भूमिगृह में। गुरुगऊरवेणं=अत्यन्त गौरवपूर्वक। दिन्नं=दिया। पवरासणं=श्रेष्ठ आसन।

मधुर वचन कहकर वह वीरमती कुमार अगडदत्त को पातालमन्दिर (तलघर) में ले आई और उसने अत्यन्त गौरवपूर्वक अगडदत्त को बैठने के लिए श्रेष्ठ आसन प्रदान किया।

३७. सप्पणयं=प्रेम पूर्वक। चिय=ही। अहयं=मैं। एयं=यह। विउलधणनिवहं=विपुल धनसमूह। तुम्हायत्तं=तुम्हारे अधीन। सच्छंदं=इच्छापूर्वक। विलसेसु=उपभोग करो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीरमती ने प्रेमपूर्वक कहा : "हे सुन्दर राजकुमार, मैं और यह विपुल धन, सभी तुम्हारे अधीन हैं। तुम अपनी इच्छा से इनका उपभोग करो।"

१३८. पयडेउं = बताकर। वासहरं = शयनकक्ष। सयणिज्जे = शय्या, बिछावन पर। वीसमसु = विश्राम करो। आणेमि = ले आती हूँ। विलेवणं = विलेपन, प्रसाधन-सामग्री। तुज्झ = तुम्हारे लिए।

अगडदत्त को शयनकक्ष बताकर वीरमती ने कहा : "आप इस शय्या पर विश्राम करें। मैं जाकर आपके लिए विलेपन (प्रसाधन) की सामग्री ले आती हूँ।"

१३९. वासहराओ = वासगृह से। विणिग्गया = निकल गई। नीइसत्थं = नीतिशास्त्र को। अप्पणो = अपने।

इस प्रकार कहकर वह वीरमती अचानक ही शयनकक्ष से निकल गई और कुमार अगडदत्त भी अपने हृदय में इस प्रकार नीतिशास्त्र की बात सोचने लगा :

१४०. अलियं = झूठ। लोहो = लोभ। मूढत्तं = मूर्खता। साहसं = साहस, क्रूरता। असोयत्तं = अपवित्रता। सहावया = स्वाभाविक।

माया, झूठ, लोभ, मूर्खता, हठ, अपवित्रता और क्रूरता ये निश्चय ही महिलाओं के स्वाभाविक दोष हैं।"

१४१-१४२. घेप्पइ = वश में की जा सकती है। सुसिणेहि = स्नेह से। विज्जइ = विद्या से, विद्वत्ता से। गुणेहि = गुणों से। लज्जइ = लज्जा से। माणिण = अभिमान से। चाडुयसय-सहस्सेहिं = हजारों चाटुकारितापूर्ण वचनों से। खरकोमल-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वयणि=कर्कश और कोमल वचनों से। विहवि=वैभव से। दुग्गेज्झं=दुर्ग्राह्य, कठिन। मणु=मानों।

और भी, "ये महिलाएँ न स्नेह से, न विद्या से, न गुणों से, न लज्जा से, न अभिमान से, न सैकड़ों-हजारों चाटुकारितापूर्ण वचनों से, न निष्ठुर और कोमल वचनों से, न वैभव से, न यौवन से और न आदर से ही वश में की जा सकती हैं। महिलाओं का मन मानों दुर्ग्राह्य होता है।"

३. जाइ=जाता (प्रकट करता) है। जुवइवग्गे सब्भावं=युवतियों के प्रति सद्भाव। मयणमोहिओ=काममोहित। दुत्तर-दुक्खसमुद्दे=दुःख के दुस्तर समुद्र में। निवडइ=डूब जाता है, गिर जाता है।

अतः, "जो पुरुष कामदेव के वशीभूत हो युवतियों के प्रति सद्भाव प्रकट करता है, वह निस्सन्देह ही दुःख के दुस्तर समुद्र में डूब जाता है।"

४. भाविऊणं=विचार कर। सयणतलं=शय्या को। वज्जिऊण=छोड़कर। लुक्को=छिप गया। अन्नपएसे=दूसरी जगह। ठविऊणं=रखकर। पडिरूवं=प्रतिरूप।

इस प्रकार की भावना करता हुआ वह कुमार अगडदत्त शय्या को छोड़कर तथा अपनी जगह अपना प्रतिरूप स्थापित कर दूसरी जगह जाकर छिप गया।

५. सयणिज्जस्स उवरिं=शय्या के ऊपर। जंतपओगेण=यन्त्र के प्रयोग से। सिला=चट्टान। ठविया=रखी गई थी। झत्ति=शीघ्र, तुरन्त। मुक्का=छोड़ी गई। पडिया=गिर पड़ी। पल्लंकउवरिम्मि=पलंग के ऊपर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यन्त्रप्रयोग द्वारा शय्या से ऊपर जो शिला स्थित थी, उसे उसने (वीरमती ने) शीघ्र ही छोड़ दिया, जिससे वह शय्या के ठीक ऊपर गिर पड़ी।

१४६. नाऊण=जानकर। चुण्णियं=चूर-चूर। पहिट्ठहियया=प्रसन्न हृदय से। पहासई=बोली। पावा=पापिनी। भाउयं=भाई को। वहंतो=वध करते समय। जाणसि=जानता है। अत्तणो=अपने को। हियए=हृदय में।

अगडदत्त को चूर-चूर हुआ जानकर पापिनी वीरमती प्रसन्न मन से बोली : "मेरे भाई को मारते समय तुमने अपने मन में कैसा अनुभव किया था ?"

१४७. पहाविओ=दौड़ा। तयाहुत्तं=उसकी ओर। गहिया=पकड़ लिया। केसकलावे=केशसमूह। एरिसे=इस प्रकार।

(वीरमती की) इस प्रकार की बात सुनकर कुमार अगडदत्त उसकी ओर दौड़ा और उसके केशों को पकड़कर इस प्रकार के वचन बोला :

१४८. हा पावे=हाय री पापिनी ! सक्कइ=सकता है। सुबुद्धि-विहवेणं=सुबुद्धि के वैभव से। जग्गइ=जागता है। पर-छट्ठि=दूसरे की छट्ठी में। नियछट्ठीए=अपनी छट्ठी में। सुयइ=सोयेगा।

"अरी पापिनी, अपने तेज बुद्धि-वैभव से मुझको कौन मार सकता है ? जो दूसरों की छट्ठी में जागता है, वह क्या अपनी ही छट्ठी में सोयेगा ?"

१४९. वसुमइ भवणाउ=धन-वैभव से भरे भवन से। निग्गओ=निकला। रत्तो=आसक्त। अइविरत्तो=अत्यन्त विरक्त। तीए=उसके। अइकूरचरिएहिं=अत्यन्त क्रूर आचरणों से।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाला (वीरमती) को पकड़कर कुमार उसके वैभवपूर्ण भवन से बाहर निकला। उस (वीरमती) के अतिक्रूर आचरणों के कारण कुमार अगडदत्त उसमें आसक्त होता हुआ भी अत्यन्त विरक्त हो उठा।

१५०. गंतुं=जाकर। रयणिपउत्ती=रात्रि की घटना। साहिया=कह दी। हओ=मारा गया। आणिया=ले आया हूँ।

राजा के समीप जाकर उस (कुमार अगडदत्त) ने रात्रि की सारी घटना उसे कह सुनाई कि "चोर तलवार से मारा गया और उसकी बहन को पकड़कर मैं यहाँ ले आया हूँ।"

१५१. पायालहरं=पातालगृह, तलघर। बीयदिणे=दूसरे दिन। दंसियं=दिखाया। रित्थं=सम्पत्ति। समप्पियं=समर्पित कर दिया।

दूसरे दिन (चोर का) वह तलघर राजा को दिखाया गया। राजा ने वहाँ से प्राप्त धन-सम्पत्ति नागरिकों को वापस सौंप दी।

१५२-१५३. तुट्ठेण=सन्तुष्ट। दिन्ना=दे दी, ब्याह दी। नियय-धूया=अपनी पुत्री। नामेण=नाम से। कमला इव=लक्ष्मी के समान। सयलजणदइया=सभी लोगों को प्रिय लगने-वाली। वरगामाण सहस्सं=एक हजार श्रेष्ठ गाँव। सयं गइंदाणं=सौ हाथी। पाइक्काणं लक्खं=एक लाख पदाति (पैदल सेना)। तुरयाणं दस सहस्साइं=दस हजार घोड़े

राजा ने सन्तुष्ट होकर, सभी लोगों को प्रिय लगने वाली तथा लक्ष्मी के समान सुन्दर अपनी पुत्री कमलसेना का विवाह राजकुमार अगडदत्त के साथ कर दिया और उसे एक हजार श्रेष्ठ ग्राम, सौ हाथी, विपुल भाण्डार, एक लाख पैदल सेना तथा दस हजार घोड़े भेंट में दिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१५४. लद्धजसो=यशस्वी। जणमणनयणाण=लोगों के मन एवं नेत्रों को। पुण्णिमाचंदो=पूर्णमासी का चन्द्रमा। अलियं=झूठ, व्यर्थ। मुणेइ=मानता है। रहिओ चिरदिट्ठबालाए=बहुत पहले देखी गई बाला के बिना।

इस प्रकार, लोगों के मन एवं नेत्रों के लिए पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर वह यशस्वी कुमार अगडदत्त बहुत पहले देखी गई बाला (मदनमंजरी) के विना सब कुछ व्यर्थ समझने लगा।

१५५. ता=तभी तक। परलोयचिंतणे=परलोक के चिंतन में। विवेकजियहरा=विवेक एवं जीवन का हरण करने वाली। मयणस्स सरा=कामदेव के बाण। पहुप्पंति=प्रभावित (विवश) नहीं करते।

क्योंकि, जब तक विवेक एवं जीवन का हरण करने वाले कामदेव के वाण प्रभावित नहीं करते, तभी तक लज्जा और अभिमान है और तभी तक परलोक-चिन्तन में वुद्धि भी रहती है।

१५६. मयणायत्तो=कामाधीन। चिट्ठइ=बैठा था। नियय-भवणम्मि=अपने भवन में। वरविलया=सुन्दर महिला।

इस प्रकार, काम के अधीन कुमार अगडदत्त जब अपने भवन में बैठा हुआ था, तभी एक सुन्दर महिला उसके पास आई।

१५७. दिन्न+आसण+उवविट्ठा=दिये गये आसन पर बैठी हुई। तं आगया सि=तुम आई हो। साहसु=कहो। अहिप्पायं=अभिप्राय।

दिये गये आसन पर बैठा उस महिला (दूती) से कुमार अगडदत्त ने पूछा: "हे सुन्दरी, तुम किस काम से आई हो? अपना अभिप्राय कहो।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१५८. निसुणसु=सुनो। अवहियहियओ होऊणं=सावधान मन होकर। अहयं=मैं। पट्ठविया=भेजी गई हूँ।

उस महिला ने कहा: "हे कुमार, सावधान मन से सुनो। मुझे मदनमंजरी ने तुम्हारे पास भेजा है।"

१५९. एयं=यह। संदिट्ठं=सन्देश भेजा है। गुरु+विरहजलण+तवियाए=दारुण विरह की अग्नि से सन्तप्त। जीयं=जीवन, प्राण। सिंचसु=सींचो।

उस (मदनमंजरी) ने यह सन्देश भेजा है: "हे सुन्दर कुमार, मैं दारुण विरह की अग्नि से सन्तप्त हो रही हूँ। मेरे प्राण निकलने के पूर्व ही, तुम अपने समागम के जल से इस (प्राण) का सिंचन करो।"

१६०-१६१. गयखेड्डं=हस्तिक्रीडा। तक्करस्स वहणं=चोर का वध। दुट्ठ+इत्थी+परिहरणं=दुष्ट स्त्री का परित्याग। नरवइपमुहेण=राजा आदि। साहुक्कारं=साधुवाद, बधाई। अहिय+विम्हिय+मणा=अत्यन्त विस्मित मनवाली। दंसण+समुस्सुया=दर्शनों के लिए उत्सुक। धरइ=धारण किये हुए है। किच्छेण=कठिनाई से।

और भी, "राजा प्रभृति और अन्य लोगों से भी तुम्हारा हाथी को खेलाना, चोर का वध करना, दुष्ट स्त्री का परित्याग करना आदि बातों से वह मदनमंजरी मन से अत्यधिक विस्मित है और तुम्हें बधाई देती है। तुम्हारे दर्शनों के लिए उत्सुक वह बड़ी कठिनाई से अपना जीवन धारण किये हुए है।"

२. दाउं=देकर। हत्थट्ठियं=हथेली पर स्थित। तंबोलं=ताम्बूल, पान। हू=ही। सिणेहसारेहिं=स्नेहयुक्त।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस महिला (दूती) के वचन सुनकर तथा उसे हाथ से पान देकर कुमार अगडदत्त ने उससे स्नेहयुक्त वचनों द्वारा इस प्रकार कहा :

१६३. पभणसु=कहो। होहि=होगी, हो। कइ विं=कुछ ही। पत्थावं=अवसर। लहिऊणं=पाकर। सत्थं=ठीक, उत्तम।

"हे कुशले, जाकर मदनमंजरी से कहो कि वह अधिक उत्सुक नहीं हो। मैं कुछ ही दिनों में अवसर पाकर सब ठीक कर दूंगा।"

१६४. अन्नन्मि दिणे=अन्य किसी दूसरे दिन। सहसा=अचानक। करहारूढा=ऊँट पर सवार। समागया=आये। भवणम्मि=भवन में। हिट्ठमना=प्रसन्नचित्त।

अन्य किसी एक दिन, अचानक, ऊँट पर सवार प्रसन्नचित दो पुरुष आये और कुमार अगडदत्त ने उन्हें अपने भवन में प्रवेश करते हुए देखा।

१६५. आलिंगिउं=आलिंगन करके। सहरिसं=हर्षपूर्वक। अम्मा-पियरस्स=माता-पिता को। कुसलपडिउत्ती=कुशल-समाचार। स+सिणेहं=स्नेहपूर्वक। परिपुट्ठा=पूछा। पमुक्कघणअंसुनिवहेण=बरसते मेघ की तरह आँसुओं से।

हर्ष के साथ उनका आलिगन कर, बरसते मेघ की तरह आँसू गिराते हुए कुमार अगडदत्त ने स्नेहपूर्वक उनसे अपने माता-पिता का समाचार पूछा।

१६६. तह वि=तो भी। तुह=तुम्हारे। विरह+महा+गहेण=विरह-रूपी महान् ग्रह से। गहियाइं=ग्रस्त।

उसके बाद, उन पुरुषों ने इस प्रकार कहा : "हे कुमार, माता-पिता कुशल पूर्वक हैं। फिर भी, वे तुम्हारे विरह-रूपी महाग्रह से ग्रस्त (होकर दुःखी रहते) हैं।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६७. कइवयदिणाण मज्झे=कुछ ही दिनों में। जइ=यदि। दंसणं=दर्शन। कुणसि=करते हो। निच्छएणं=निश्चय ही। विमुक्कजीवाण=जीवन छोड़कर। वच्चिहिसि=चले जायेंगे (मर जायेंगे)।

"यदि कुछ ही दिनों के भीतर जाकर तुम उनके दर्शन न करोगे, तो हे कुमार, निश्चय ही, वे जीवन छोड़कर चले जायेंगे।"

१६८. निसामिऊणं=सुनकर। सज्जावेऊण=तैयारी करके। नियय+खंधारं=अपने स्कन्धावार (सेना) को। पत्तो=पहुँचा। जंपइ=बोला।

उनका ऐसा कथन सुनकर (कुमार अगडदत्त) अपनी सेना तैयार कर राजा के पास पहुँचा और उससे इस प्रकार की बात कही :

१६९. तायस्स=पिता के। समीपाओ=पास से। उस्सुयकरहारूहा=चलने को तैयार ऊँट पर सवार। दुवे=दो। पुरिसा=पुरुष। आणणत्थं=लिवा ले जाने के लिए। समागया=आये हैं।

"हे प्रभो, पिताजी के यहाँ से, उत्कण्ठित ऊँट पर सवार दो पुरुष मुझे लिवा ले जाने के लिए आये हैं। अब जो उचित हो, वह आदेश करें।'

१७०. तो=तब। वच्चसु=जाओ। तायपासम्मि=पिता के समीप। नियत्तेसु=वापस आ जाना।

तब, नरपति ने कहा : "हे कुमार, तुम अपने पिता के पास जाओ, किन्तु जाकर फिर वापस आ जाना।"

१७१. दाऊण=देकर। संमाणेऊण=सम्मानित कर। महुर+वयणेहिं=मधुर वचनों से। नियधूयाए समेओ=अपनी पुत्री के साथ। पेसिओ=भेजा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नरपति ने आभूषण देकर और मधुर वचनों से सम्मानित कर अपनी पुत्री के साथ कुमार अगडदत्त को (उसके पिता के घर) भेज दिया।"

१७२. काऊणं=करके। संजत्तिं=तैयारी। दावावेउं=दिलवाकर, देकर। पयाणयं=प्रयाण का आदेश। सिविरं=छावनी। एगरहेणं=एक रथ से। सयं=स्वयं।

कुमार अगडदत्त ने तैयारी करके अपने शिविर को प्रस्थान का आदेश दिया और स्वयं एक रथ में सवार होकर, नगर के बीच जाकर रुक गया।

१७३. जामिणिपढमे पहरे=रात्रि के प्रथम प्रहर में। दूईए संगमीए पासम्मि=संगमी नाम की दूती के पास। जाणणट्ठाए=जानने के लिए। पट्ठविओ=भेजा।

कुमार अगडदत्त ने रात्रि के प्रथम पहर में संगमी नाम की दूती के पास अपने (विश्वस्त) पुरुष को (मदनमंजरी के अपने साथ चलने के बारे में) जानने को भेजा।

१७४. गंतूण=जाकर। अम्हाण=हमारा। पविसियं=प्रवेश कर गया है। मग्गे=मार्ग में। एगागी=एकाकी, अकेला। रायसुओ=राजकुमार अगडदत्त। तुम्हाण कज्जेण=तुम्हारे काम के लिए। चिट्ठइ=रुका हुआ है।

उस पुरुष ने जाकर संगमी से कहा : "हमारा शिविर प्रस्थान कर मार्ग में प्रविष्ट हो चुका है। अकेला राजकुमार ही तुम्हारे काम के लिए रुका हुआ है।"

१७५. ता=तो। गतूणं=जाकर। आणसु=ले आओ। लहु=शीघ्र ही। एत्थ=यहाँ। समीहियकज्जं=इच्छित कार्य। संपज्जइ=पूरा हो। अज्ज=आज।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"तो हे सुन्दरी, तुम जाकर शीघ्र ही मदनमंजरी को यहाँ ले आओ, जिससे कि आज तुम्हारा इच्छित कार्य पूरा हो जाय।"

१७६. तुरियतुरियं=जल्दी-जल्दी। नियसामिणीए=अपनी स्वामिनी से। साहइ=बोली। कुमरपुरिसेण=कुमार के आदमी ने।

उसके वचन सुनकर दूती संगमी ने अतिशीघ्र जाकर, जो कुछ कुमार अगडदत्त के सन्देशवाहक पुरुष ने कहा था, उसे, अपनी स्वामिनी से कह सुनाया।

१७७. आयण्णिऊण=सुनकर। रहससमुच्छलिय=हर्ष से पुलकित। बहलरोमंचा=अत्यधिक रोमांचित। संचल्लिया=चल पड़ी।

हर्ष से पुलकित तथा अत्यधिक रोमांचित वह मदनमंजरी अचानक ही (कुमार अगडदत्त के जाने का समाचार) सुनकर क्षणमात्र में ही प्रिय सखी के साथ अपने घर से चल पड़ी।

१७८. पत्ता=पहुँची। आरूढा=सवार हुई। जाणे=यान, रथ पर। आरुहसु=सवार हो जाओ। सुयणु=सुन्दर शरीरवाली। रायतणएणं=राजकुमार अगडदत्त ने।

रथ पर सवार मदनमंजरी जब कुमार अगडदत्त के समीप पहुँची, तब राजकुमार अगडदत्त ने उससे कहा: "हे सुन्दरी, मेरे रथ पर शीघ्र ही सवार हो जाओ।

१७९. चोइऊण=हाँककर। तुरए=घोड़ों को। रज्जु=रस्सी। वामहत्थेण=बायें हाथ से। संपत्तो=जा पहुँचा। नियय-कडयम्मि=अपने शिविर (फौज) में। नीहरिउ=निकलकर। गहिऊण=पकड़कर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसके बाद, कुमार अगडदत्त बायें हाथ से रस्सी (लगाम) पकड़कर घोड़े को हाँकते हुए नगर से निकल पड़ा और अपने कटक (फौज) के बीच जा पहुँचा।

१८०. तुरियं=तत्काल, शीघ्र ही। पयाणढक्का=प्रस्थान करने का नगाड़ा। दवाविया=बजवा दिया। पत्तमेत्तोण=पहुँचते ही। सुसंजत्ति=पूरी तैयारी। सेन्नं=सेना। समत्थं=समर्थ।

पहुँचते ही उस अगडदत्त ने शीघ्र ही प्रयाण का नगाड़ा बजवा दिया। पूरी तैयारी करके उसकी समर्थ सेना भी चल पड़ी।

१८१. अणवरयपयाणेहिं=निरन्तर चलते रहने से। विसयं=देश को। लंघेवि=लाँघकर। महाअरण्णे=घोर जंगल में। सावय=जंगली जानवर। तरु=वृक्ष। संकुले=व्याप्त। भीमे=भयानक।

वह अगडदत्त निरन्तर चलते रहने से उस राजा के देश को लाँघकर भयंकर जंगली हिंस्रक पशुओं एवं घने वृक्षों से व्याप्त घोर जंगल में जा पहुँचा।

१८२. अइ+विसम+महादुम+संकुलम्मि=अत्यन्त विषम और विशाल वृक्षों से व्याप्त। मग्गम्मि=मार्ग में। वच्चमाणस्स=जाते हुए। सव्व+जणाण+आणंदयरो=सभी जनों के लिए आनन्दकारी। पाउसकालो=वर्षाकाल। समणुपत्तो=आ गया।

जब कुमार अगडदत्त अत्यन्त विषम और विशाल वृक्षों से युक्त जंगली मार्ग से जा रहा था, तभी सभी लोगों को आनन्दित करनेवाला वर्षा-काल आ गया।

१८३. तम्मि मणहरकाले=उस मनोहारी समय में। वच्चइ=जा रहा था। वणस्स=वन के। मज्झे=मध्य में। सहस त्ति=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अचानक ही। भिल्लसामी=भीलों का स्वामी। पडिओ=आ झपटा। सिविरम्मि=शिविर पर।

उस सुहावने समय में, जब कुमार अगडदत्त वन के बीच से जा रहा था कि तभी एक भिल्लराज उसके शिविर पर आ झपटा।

८४. वलेणं=सेना ने। बलदप्पिएणं=पराक्रम के दर्प से युक्त। घणवंदं=मेघवृन्द। पक्खित्तं=तितर-बितर कर दिया।

पराक्रम से दृप्त उस भिल्लराज की सेना ने अचानक ही, जिस प्रकार बादलों के समूह को हवा छिन्न-भिन्न कर देती है, उसी प्रकार, कुमार अगडदत्त के स्कन्धावार, अर्थात् शिविर को चारों दिशाओं में तितर-बितर कर दिया।

८५. एगेण संदणेणं=एक रथ पर। नियपणइणीए सहिओ=अपनी प्रेमिका के साथ। हरि व्व=सिंह के समान। रणमज्झे=युद्ध के बीच। थक्को=डटा रहा। मायंगजूहस्स=हाथियों के झुण्ड के।

एक रथ पर अपनी प्रेमिका के साथ राजकुमार अगडदत्त हाथियों के समूह के बीच सिंह के समान युद्ध में डटा रहा।

८६. पहयं=आहत। भग्गं=भग्न हो गया। अन्नन्नदिसिपलाणं=दूसरी-दूसरी दिशाओं में भागनेवालों का। गंधगजस्सेव=गन्धहस्ती के समान। करिजूहं=हाथियों का झुण्ड।

इसके अनन्तर, जिस प्रकार गन्धहस्ती के कारण हाथियों का समूह बिखर जाता है, उसी प्रकार कुमार अगडदत्त के बाणों से आहत भिल्लों की समस्त सेना भी भग्न होकर विभिन्न दिशाओं में भाग गई।

८७. नियसेन्नं=अपनी सेना को। पेच्छिऊण=देखकर। निट्ठुर-मक्कोसंतो=निष्ठुरतापूर्वक गर्जन करता हुआ। सवडंमुहो=सामने की ओर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तो फिर, भिल्लपति भागती हुई अपनी सेना को देखकर क्रूरतापूर्वक चिल्लाता हुआ अचानक ही सामने की ओर झपटा।

१८८. दोन्नि वि=दोनों ही। अन्नोन्नं=परस्पर। पक्खिवंति=फेंकने लगे। सरनिवहे=बाणों के समूह। निउणत्तणओ=अतिशय निपुण।

वे दोनों ही (अगडदत्त और भिल्लपति) एक-दूसरे पर बाणों की लगातार वर्षा करने लगे। किन्तु, धनुर्वेद में अतिशय निपुण उन दोनों में कोई भी एक दूसरे को छल नहीं सका।

१८९. पवंचेण=प्रपंच, मायाजाल से। छलेण=छल-कपट से। मंत+तंत+जोएण=मन्त्र-तन्त्र के योग से। पहणिज्जइ=प्रहार किया जाता है। पडिवक्खो=प्रतिपक्ष, शत्रु। नीईए=नोति से। सक्केज्ज=सकता है।

तब, कुमार अगडदत्त ने सोचा : "जिस व्यक्ति की युद्धनीति सक्षम न हो, तो उसे बुद्धि, प्रपंच, छल तथा मन्त्र-तन्त्र के प्रयोग से अपने प्रतिद्वन्द्वी को मारना चाहिए।"

१९०. भिल्लवइ=भीलों का सरदार। धनु+गुण+सत्थेसु=धनुष-बाण एवं अन्य शस्त्रों के चलाने में। लद्ध=प्राप्त। माहप्पो=माहात्म्य, महारत। पहणेउं=मारने के लिए। उवायं=उपाय को।

"इस भिल्लपति को धनुष-बाण और अन्य शास्त्रों को चलाने में बहुत महारत हासिल है, इसे मैं मारने में समर्थ नहीं हूँ, इसलिए कोई अन्य उपाय क्यों न सोचूँ?"

१९१. निया=अपनी। भज्जा=भार्या, पत्नी। कुणसु=करो। पिए=प्रिये! सिंगारं=शृंगार। उवविससु=बैठो। रहस्स=रथ के। तुंडम्मि=अगले भाग पर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार सोचकर कुमार अगडदत्त ने अपनी भार्या से कहा : "हे प्रिये, तुम शृंगार करके रथ के अग्रभाग पर बैठ जाओ।"

१९२. उवविट्ठाए=बैठी हुई। तोए=उसके। पवरं=श्रेष्ठ। रूवसंपयं दट्ठूण=रूप-सम्पदा को देखकर। पहओ=आहत हो गया। मयणस्स=कामदेव के।

रथ पर बैठी हुई अगडदत्त की भार्या की श्रेष्ठ रूप-सम्पत्ति को देख, उस पर दृष्टि लगाने से भिल्लपति काम के बाण से आहत हो गया।

१९३. नील+उप्पल+पत्त+सरिच्छएण=नील+कमल के पत्ते के समान। आरामुहेण=आरे के समान मुखवाले। बाणेणं=बाण से। रायतणएणं=राजकुमार ने। वच्छत्थलम्मि=छाती पर।

तभी, राजकुमार अगडदत्त ने नीलकमल के पत्ते के समान, तेज नोंक वाले बाण से अचानक भिल्लपति के वक्षःस्थल पर पहार किया।

१९४. मम्म+पएसम्मि=मर्म प्रदेश में। हओ=मारा। पडिओ=गिर पड़ा। ईसिं=कुछ-कुछ। वियसिय+नयणो=विकसित नेत्र वाला। जंपइ=कहने लगा। वयणं=वचन।

मर्मस्थल पर आघात लगने के कारण भिल्लराज पृथ्वी पर गिर पड़ा और नेत्रों को कुछ विकसित करता हुआ इस प्रकार की बात कहने लगा :

१९५. न+अहं=न मैं। सर+पहओ=बाणों से आहत। कुसुमाउहस्स=कामदेव के। चोज्जं=आश्चर्य। छलिओ=छला गया।

और भी, "मैं तुम्हारे बाण से आहत नहीं हुआ हूँ, बल्कि कामदेव के बाण से आहत हुआ हूँ। अथवा, इसमें आश्चर्य ही क्या? काम से कौन नहीं छला जाता?"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१९६. पयंपिऊणं=कहकर। कालगओ=मर गया। झत्ति=झट से, शीघ्र ही। पलोएइ=देखता है।

इस प्रकार कहकर भिल्लराज शीघ्र ही मर गया। इसी बीच कुमार अगडदत्त ने अपने परिवार की ओर देखा।

१९७. तुरए=घोड़े। सेवयपुरिसे=सेवक पुरुष। वरसुहडे=श्रेष्ठ योद्धा। संचलिओ=चल पड़ा। नियपुराहुत्तं=अपने नगर की ओर।

जब न रथ, न घोड़े, न सेवक पुरुष और न श्रेष्ठ योद्धा ही बचे, तब कुमार अगडदत्त (अकेला ही) एक रथ पर अपने नगर की ओर चला।

१९८. कहकहवि=जिस किसी प्रकार, बड़ी कठिनाई से। अरण्णं=अरण्य, जंगल। लंघिऊण=लाँघकर, पार कर। गोउलं+एगं=एक गोशाला। पत्तो=पहुँचा। गावी+निवहेण=गायों के समूह से।

वह निर्भीक कुमार अगडदत्त जिस किसी प्रकार उस वन को पार कर गायों के समूह से रमणीय एक गोकुल (गोशाला) में पहुँचा।

१९९. एत्थंतरम्मि=इसी बीच। गोउलाउ=गोकुल से। पत्ता=पहुँचे। भणंति=कहने लगे।

इसी बीच कुमार अगडदत्त को देखकर उस गोकुल से दो पुरुष उसके समीप पहुँचे और मधुर वचनों से कहने लगे :

२००. कत्तो=कहाँ से। कत्थ=कहाँ। वच्चिहिसि=जाओगे। कहसु=कहो। अम्हाणं=हमें।

"हे श्रेष्ठ पुरुष, तुम कहाँ से आ रहे हो और कहाँ जाओगे? यह हमें कहो।" तब उस राजकुमार अगडदत्त ने कहा : "शंखपुर जाऊँगा।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२०१. पुणो=पुनः। सुपुरिस=सज्जन पुरुष। तुज्झ सत्थेण=तुम्हारे साथ। अम्हे वि=हम भी। वच्चामो=चलें। सुपसाओ=सत्कृपा। होसि=होगी।

तब उन दोनों पुरुषों ने कहा: 'हे सत्पुरुष: यदि तुम्हारी कृपा हो, तो हम भी तुम्हारे साथ शंखपुर चलें।"

२०२. एवं ति होउ=ऐसा ही हो। पडिवज्जिऊण=स्वीकृति देकर। सत्थिल्लयपुरिसा=साथी लोग। जोएइज्जा=जोतने लगता है।

'ऐसा ही हो' इस प्रकार स्वीकार कर वह राजकुमार अगडदत्त रथ में जब घोड़ों को जोतने लगता है, तभी उन पुरुषों ने उससे इस प्रकार की बात कही:

२०३. एएणं=इस। महंतं=विशाल। कंतारं=जंगल। दुज्जोहणो चोरो=दुर्योधन नामक चोर। चिट्ठइ=रहता है। चंडो=प्रचण्ड, भयंकर।

"इस मार्ग में अत्यन्त विशाल जंगल है। उसी के बीच दुर्योधन नाम का एक भयंकर चोर रहता है।"

२०४. मयमत्तो=मदोन्मत्त। गलगज्जि=गले से गर्जन। कुणमाणो=करता हुआ। दिट्ठीविसो=दृष्टिविष। सप्पो=सर्प। वग्घो=बाघ।

"उस जंगल में मदोन्मत्त, गले से गरजने (चिग्घाड़ने) वाला और अतिविषम हाथी एवं दृष्टिविष सर्प तथा भयंकर बाघ भी रहता है।"

२०५. सावयगणा=जंगली जानवर। कूरा=क्रूर, निर्दय। मंसासिओ=मांसभक्षी। दुप्पेच्छा=देखने में भयानक। नाऊण=जानकर। वच्चसु=चलो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसमें कई दूसरे क्रूर, मांसभक्षी और दुष्ट जंगली जानवर भी रहते हैं। इसे मन में जानकर ही इस मार्ग से आगे चलो।"

२०६. कुणह=करो। पयत्तह=आगे बढ़ो। पहम्मि=रास्ते में। संपत्ता देमि=पहुँचा दूँगा।

तब, कुमार अगडदत्त ने कहा: 'भय मत करो, रास्ते पर आगे बढ़ो, मैं तुम्हें कुशलतापूर्वक शंखपुर पहुँचा दूँगा। अधिक क्या कहूँ?"

२०७. निसामिऊणं=सुनकर। अन्ने=दूसरे। सत्थिल्लया=साथी, सहयात्री। रायतणएण समयं=राजकुमार के साथ। संचलिया=चले। मुक्कभयपसरा=भय से मुक्त होकर।

इस प्रकार सुनकर अन्य सभी साथी पुरुष और बहुत सारे लोग निडर होकर राजकुमार अगडदत्त के साथ चले।

२०८-९. दीहजडामउडभूसियसरीरा=दीर्घजटा-रूपी मुकुट से भूषित शरीरवाला। भसमुद्धूलियगत्तो=भस्म से लिपटे हुए शरीरवाला। तिसूलचक्केण सणाहो=त्रिशूल और चक्र के साथ। परिचारयपरिचरिओ=सेवकों द्वारा सेवित। पत्थियलिंगेण वावडकरग्गो=भिक्षासूचक भिक्षापात्र हाथ में धारण किये हुए। तेयंसी=तेजस्वी। सुपसत्थो=अतिप्रशस्त। महव्वइओ=महाव्रती। संपत्तो=आया।

इसी बीच वहाँ दीर्घ जटा के मुकुट से भूषित, शरीर में भस्म लगाये हुए, त्रिशूल-चक्र लिये हुए, भिक्षासूचक भिक्षापात्र हाथ में धारण किये, सेवकों द्वारा सेवित तेजस्वी एवं अतिप्रशस्त एक महाव्रती साधु वहाँ आ पहुँचा।

२१०. सुसत्थेणं=साथ रहने से, सत्संग से। पुत्तय=पुत्र। तित्थाणं=तीर्थों के। दंसणनिमित्तं=दर्शन के लिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस साधु ने कुमार अगडदत्त से कहा : "हे पुत्र, मैं भी तुम्हारे सत्संग से तीर्थों के दर्शनों के लिए शंखपुर चलूँगा।"

१११. अन्नं च=और भी। मह समीवे=मेरे पास। दीणारा=दीनार। बलिपूयणत्थदिन्ना=बलि पूजा के निमित्त दिये गये। देवाणं=देवताओं के लिए। धम्मियनरेहिं=धार्मिक लोगों द्वारा।

"और भी, हे पुत्र, मेरे पास कई दीनार, अर्थात् स्वर्णमुद्राएँ हैं, जिन्हें धार्मिक पुरुषों ने देवताओं के लिए वलि, पूजन आदि के निमित मुझे प्रदान किया है।"

११२. गेण्हेसु=ले लो, रख लो। महायस=महायशस्वी। दविण-निवहो=धनसमूह। निब्भया=निर्भय होकर। समप्पिया=समर्पित कर दिया।

"हे महायशस्वी कुमार, उन दीनारों को तुम अपने पास रख लो, ताकि मैं निडर होकर चल सकूँ।" इस प्रकार, अनेक तरह से अनु-नय-विनय कर उस साधु ने वह धन कुमार अगडदत्त को समर्पित कर दिया।

११३. परितुट्ठो=सन्तुष्ट। आसीसं=आशीर्वाद। देइ=दिया। नरवइसुयस्स=राजकुमार अगडदत्त के लिए। सत्थिल्लएहिं सद्धि=साथियों के साथ। कवडकयवेसो=कपटवेशधारी।

राजकुमार अगडदत्त द्वारा धन को सुरक्षित रख लेने से सन्तुष्ट होकर उस साधु ने उसे आशीर्वाद दिया, फिर कपटवेशधारी वह (साधु) अपने अन्य साथियों के साथ चल पड़ा।

११४. मुणिउं=जानकर। सरूवं=स्वरूप, लक्षण, हाव-भाव। समं=साथ। परिणामे=फल। हिययमज्झम्मि=मन में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस साधु के स्वरूप को पहचानकर कुमार अगडदत्त मन में सोचने लगा : "इसके साथ जाने का परिणाम अच्छा नहीं होगा।"

२१५. परिभाविऊण=विचार कर। चोइया=आगे बढ़ाया। पयट्टो=चल पड़ा। रहो=रथ। संपत्तो=पहुँचा। तुरया=घोड़ों को। गहणदेसम्मि=गहन प्रदेश में, घने जंगल में।

इस प्रकार मन में सोचकर कुमार ने घोड़ों को हाँका। रथ रास्ते पर चल पड़ा और घने जंगल में जा पहुँचा।

२१६. महव्वएणं=महाव्रती साधु ने। सत्थिल्लया=साथियों से। पाहुणयं=आतिथ्य-सत्कार, पहुनाई। सव्वहा=सभी प्रकार से। काहं=करना चाहता हूँ।

उस महाव्रती साधु ने साथियों से इस प्रकार कहा : "आज मैं सभी प्रकार से तुम्हारा आतिथ्य-सत्कार करना चाहता हूँ।"

२१७. इह=इस। रण्णमज्झे=अरण्य के बीच में। गोउलमेगं=एक गोकुल, गोशाला, गाय का बाड़ा। वरिसालो=वर्षाकाल, चातुर्मास। पभूयधणनिवहं=बहुत अधिक धनी। आवंतेणं=पिछला।

"इस वन में प्रचुर धन से परिपूर्ण एक गोकुल (गोशाला) है। वहाँ मैंने पिछले वर्ष अपना वर्षाकाल व्यतीत किया था।"

२१८. तम्मि=उसमें। गोउलिया=गोकुल-निवासियों ने। आवज्जिया=प्रभावित किया, हृदय जीत लिया। दाहिंति=देंगे। भोज्जं=भोज। पाहुणा=मेहमान, पाहुन। अज्ज=आज।

"वहाँ मैंने अपने गुणों से समस्त गोकुल-निवासियों का हृदय जीत लिया था। वे आज भोजन करायेंगे, इसलिए तुम सभी आज मेरे मेहमान हो।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२१९. निमंतिऊणं=निमन्त्रित करके। समागओ=लौट आया। पायसघयदहियाणं=दूध, घी और दही के। गरुए=बड़े-बड़े। भण्डए=बरतन, हाँड़ी। भरिऊणं=भरकर।

इस प्रकार निमन्त्रित करके वह महाव्रती साधु चला गया और दूध; घी एवं दही से भरे हुए बड़े-बड़े बरतनों को लेकर लौट आया।

२२०. महुरवयणेहिं=मधुर वचनों से। अज्जम्हाणं=आज हमारी। हिअइच्छियनिव्वुइं=मनोवांछित की पूर्ति से सुखी। कुणसु=करो।

आकर उस साधु ने मधुर वचनों द्वारा कुमार अगडदत्त से कहा: "हे पुत्र, आज मेरे हृदय की इच्छा पूर्ण कर मुझे सुखी बनाओ।"

२२१. गुरुवियणा=बहुत अधिक वेदना। मज्झ=मेरे। उत्तमंगम्मि=सिर में। कप्पए णेय=योग्य नहीं है। वट्टइ=है। जईण=साधुओं के।

तब कुमार अगडदत्त ने कहा: "आज मेरे सिर में बहुत जोर की वेदना हो रही है और दुसरी बात यह भी है कि मैं संन्यासियों का भोजन ग्रहण करने में असमर्थ हूँ।

२२२. सत्थेल्लया=साथी। दिट्ठिसन्नाए=दृष्टि के संकेत से। एएण=इसके द्वारा। समाणियं=लाया हुआ। भत्तं=भोजन। भोत्तव्वं=खाने योग्य।

कुमार अगडदत्त ने अपनी आँखों के इशारे से सभी साथियों से कहा: "इसके द्वारा लाया गया भोजन खाने योग्य नहीं है।"

२२३. अवगण्णिऊण=अवहेलना करके। विसविमिस्सं=विष-मिश्रित। भुंजियमेत्ता=खाने के साथ ही। निच्चेयणा=निश्चेतन, मूर्च्छित।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमार के वचन की अवहेलना करके उन साथियों ने उस विषमिश्रित भोजन को खा लिया और खाते ही सभी-के-सभी एकाएक मूर्च्छित हो गये।

२२४. जममंदिरं पवन्ने=यम के भवन में पहुँचने पर, अर्थात् मर जाने पर। महावइओ=महाव्रती, साधु। मेल्लंतो=छोड़ते हुए। सरनिवहं=बाण-समूह। पहाविओ=झपटा, दौड़ा। कुमारवहणत्थं=कुमार का वध करने के लिए।

उन सभी को मरा हुआ जानकर वह साधु कुमार अगडदत्त को भी मार डालने के लिए लगातर वाण छोड़ते हुए उसकी ओर झपटा।

२२५. सकोवेण=कोपसहित। वंचिऊण वेएण=वेगपूर्वक (अपने को) बचा करके। अद्धयंदेणं=अर्द्ध चन्द्र (बाण) द्वारा। मम्मपएसे पहओ=मर्मप्रदेश में प्रहार किया।

कुमार अगडदत्त ने भी क्रुद्ध होकर, वेगपूर्वक बाणों से स्वयं को बचाते हुए एक अर्द्धचन्द्राकार वाण (उस कपटी साधु के) मर्मस्थल पर मारा।

२२६. महीए=धरती पर। पडिओ=गिर पड़ा। जीवियसेसो=जीवन के शेष क्षण में। पयंपए=बोला। दुज्जेओ=दुर्जेय। एयं=इस प्रकार। दुज्जोहणो नाम=दुर्योधन नाम का।

वह कपटी संन्यासी तत्काल ही पृथ्वी पर गिर पड़ा और अपने जीवन के शेष क्षण में इस प्रकार कहने लगा : "हे पुत्र, मैं दुर्योधन नाम का दुर्जेय चोर हूँ।"

२२७. रंजियं=रंजित, प्रसन्न किया। निब्भयचित्तेणं=निर्भय चित्त से। महाभाग=भाग्यशाली। अहयं=मैं। बाण-घाएणं=बाण के घात से। संपत्तो=प्राप्त हुआ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"हे महाभाग, तुमने अपने हृदय की निर्भयता से मेरे मन को प्रसन्न किया है। अब मैं तुम्हारे बाण के घात से मरने ही वाला हूँ।"

२२८. आयण्णसु=सुनो। एयस्स गिरिस्स=इसी पर्वत के। वामपासम्मि=बाईं ओर। दोण्ह सरियाण=दो नदियों के। मज्झे=बीच में। रमणीयं=सुन्दर। देवउलं=देवकुल, देवमन्दिर। अत्थि=है।

"मेरी बात सुनो : इसी पर्वत की बाईं तरफ दो नदियों के बीच में एक सुन्दर देवकुल (मन्दिर) है।"

२२९. पच्छिमभाए=पश्चिमी भाग में। तलिणसिला=छोटा पत्थर। पेल्लिऊण=ढकेलकर। भूमिघरं=तलगृह को। सज्जिया=सज्जित। सुजत्तेणं=प्रयत्नपूर्वक। पविसेसु=प्रवेश करना।

"उस (मन्दिर) के पश्चिमी भाग में एक छोटी-सी शिला प्रयत्न पूर्वक सजाई गई है। उसे ढकेलकर हटाने पर बाईं तरफ एक तलघर मिलेगा। तुम उसमें प्रविष्ट हो जाना।"

२३०. तस्सत्थि मज्झभाए=उसके बीच में है। पवररूवगुण-कलिया=श्रेष्ठ रूप एवं गुणों से युक्त। नवजोव्वणा=नवयौवना। विणीया=विनम्र। नामेणं जयसिरी=जयश्री नाम की। सरला=सरल स्वभाववाली। मम महिला=मेरी पत्नी।

"उसके मध्यभाग में श्रेष्ठ रूप और गुणों से युक्त, विनम्र एवं सरल स्वभाव वाली जयश्री नाम की मेरी पत्नी रहती है।"

२३१. रित्थं=धन। महंतं=बहुत अधिक। चिट्ठइ=रखा है। अप्पायत्तं=अपने अधीन। करेज्जासु=कर लेना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"उस भवन (तलघर) के मध्य में बहुत-सा धन रखा हुआ है। हे सत्पुरुष, तुम उस सबको अपने अधीन कर लेना।"

२३२. अंतो वट्टइ=अन्त समय है। गयम्मि जीयम्मि=प्राण निकल जाने पर। कट्ठाणि=लकड़ियाँ। देसु=दे देना। भणमाणो=कहता हुआ। पंचत्तं पाविओ=मृत्यु प्राप्त की, मर गया।

"मेरा तो अब अन्तिम समय आ गया है। जब मैं मर जाऊँ, तब मेरे शरीर को लकड़ी देकर जला देना।" इस प्रकार कहता हुआ वह अचानक निष्प्राण हो गया।

२३३. दारुसमूहे=लकड़ी का समूह। मेलिय=एकत्र कर। दिन्नो=दे दी। हुयवहो=अग्नि। आरुहिउं=चढ़कर, सवार होकर। पवररहं=श्रेष्ठ रथ पर। कहियदेसम्मि=(चोर द्वारा) कहे हुए स्थान की ओर।

कुमार अगडदत्त ने लकड़ियाँ एकत्र कर उस (चोर) के मृत शरीर का अग्नि संस्कार कर दिया, और तब अपने श्रेष्ठ रथ पर सवार होकर, (चोर ने) उसे जहाँ जाने को कहा था, वहाँ चला गया।

२३४. दोसरियाणं=दो नदियों के। जोइया=देखी। सिला=शिला, पत्थर। दारं=दरवाजा। सद्दो=आवाज। उग्घाडिऊणं=उघाड़कर, खोलकर।

कुमार अगडदत्त ने दो नदियों के बीच स्थित देवकुल की बाईं ओर एक शिला देखी। (उसे ढकेलकर) उसने दरवाजा खोला और जैसा कहा गया था, वैसी ही आवाज दी।

२३५. दारदेसम्मि=दरवाजे पर। रमणी=महिला। सहसागंतूण=अचानक ही आकर। कोइलमहुरसरेणं=कोयल के समान मधुर स्वर से। आगच्छ=आ जाओ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसके बाद वह रमणी अचानक ही द्वार पर आकर कोयल के समान मधुर स्वर में इस प्रकार बोली : "भवन के बीच में आ जाओ।"

२३६. साणंदं=आनन्द-सहित। पेच्छेवि=प्रेक्षणीय, दर्शनीय। पलोएइ=देखता है। अवहत्थेणं हओ=हाथ उठाकर झटका दिया।

जब कुमार अगडदत्त उस रमणी के दर्शनीय रूप को आनन्द-सहित देख रहा था, तभी उसे मदनमंजरी ने अचानक हाथ उठाकर झटका दिया, यानी सावधान किया।

२३७. बंधुपियासहियाओ=बन्धु-बान्धव, पिता तथा सखियों को। तुज्झ कज्जेणं=तुम्हारे लिए। चत्तं=छोड़ दिया। अलज्जिर=हे निर्लज्ज! पसत्तो=आसक्त।

और कहा : "हे निर्लज्ज, तुम्हारे लिए ही मैंने बन्धु-बान्धव, पिता, सखियाँ, नगर और घर भी छोड़ दिया फिर भी तुम अन्य स्त्री के प्रति आसक्त हो?"

२३८. निसुणेवि=सुनकर। तोइ=उसके। वज्जेवि=छोड़कर। वण=वन को। संदणवरमारुहिओ=श्रेष्ठ रथ पर सवार हुआ। ताहे=तब। अग्गओ=आगे।

मदनमंजरी के वचन सुनकर कुमार अगडदत्त अचानक ही उस वन को छोड़कर, अपने श्रेष्ठ रथ पर सवार हुआ और तब आगे चल पड़ा।

२३९. लंघइ=पार करता है। सुहेणं=सुखपूर्वक (निर्विघ्न)। केत्तियमेत्तं=कितना-मात्र। रण्णं=जंगल। सवरसंघायं=शबरों के समूह को। नासंतं=भागते हुए।

जब कुमार अगडदत्त ने भीषण वन को कुछ ही दूर निर्विघ्न रूप से पार किया था कि तभी उसने शबरों (भीलों) के समूह को भागते हुए देखा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२४०. वणयराण=वनेचरों के। संघाए=समूह, झुण्ड को। भयतसिए=भय से त्रस्त, भयभीत। मयकरिणा=मतवाला हाथी। होयव्वं=होना चाहिए।

इसके बाद, कुमार अगडदत्त ने भयत्रस्त वनेचरों (भीलों) के समूह को देखकर अपने मन में सोचा : "यहाँ अवश्य ही मदोन्मत्त हाथी होना चाहिए।"

२४१. सासंको=आशंका-सहित, आशंकित। तद्दिसाहुत्तं=उस दिशा की ओर। ससिसंखकुंदधवलं=चन्द्रमा, शंख एवं कुन्दपुष्प के समान शुभ्र वर्ण।

जब कुमार अगडदत्त ने आशंकित हृदय से उस दिशा की ओर देखा, तब उसे चन्द्रमा, शंख और कुन्दपुष्प के समान उज्ज्वल एक श्रेष्ठ हाथी दिखाई पड़ा।

२४२. पज्झरियमयपवाहं=झरते हुए मद-प्रवाह वाले। मोडंतं=तोड़ते हुए। महाकाए तरुवरे=विशाल वृक्षों को। उव्विग्गा=उद्विग्न, व्याकुल।

गण्डस्थल से झरते हुए मद के प्रवाह वाले तथा विशाल वृक्षों को तोड़ते हुए (उस हाथी को) देखकर मदनमंजरी क्षणमात्र में ही मन में भयभीत हो उठी।

२४३. मा=मत वीहसु=डरो। मुद्धि=मुग्धे, भोली, भाली। रण्णकलहाओ=जंगली हाथी के बच्चे से। गरुयाण=महापुरुषों के लिए। इयरपुरिसाण=इतर पुरुषों (कायरों) के लिए। संपया-आवया य=सम्पत्ति और विपत्ति (सुख और दुःख)।

तब, कुमार अगडदत्त ने मदनमंजरी को आश्वस्त करते हुए कहा : "हे मुग्धे, तुम इस जंगली हाथी के बच्चे से भयभीत मत हो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महान् व्यक्तियों के लिए सम्पत्ति और विपत्ति समान ही होती हैं, इतर पुरुषों (कायरों) के लिए नहीं।"

२४४. अवयरिओ=उतर पड़ा। रहवराउ=श्रेष्ठ रथ से। तुरिया=शीघ्र। गंतूणं+उत्तरीयं=जाकर (अपनी) चादर को। पक्खित्तं=फेंका। झत्ति=शीघ्र ही। पुरओ=आगे।

इस प्रकार अपनी प्रियतमा को समझाकर कुमार अगडदत्त तुरन्त श्रेष्ठ रथ से उतर पड़ा और शीघ्र ही हाथी के आगे जाकर उसने अपना उत्तरीय (चादर गोलकर) उसकी ओर फेंका।

२४५. मायंगो=हाथी। छोहं=धक्का। उत्तरिज्जम्मि=चादर पर। सुदक्खो=(हस्तिक्रीड़ा में) अतिशय दक्ष। झडत्ति=झट से, तत्काल ही। आरुहइ=चढ़ गया। खंधम्मि=कन्धे पर

वह हाथी उस चादर पर जब तक आघात करता रहा, तब तक हस्ति-क्रीडा में सुदक्ष कुमार भी शीघ्र ही उसके कन्धे पर सवार हो गया।

२४६. खणमेत्तेणं=क्षणमात्र में ही। मत्तकरिवरो=मदोन्मत्त हाथी। णेगवणयरकयंतो=अनेक वनेचरों के लिए यमराज केसमान। सवसो=अपने वश में। कओ=कर लिया। अहि व्व=सर्प के समान। मणिमंतजोएण=मणि-मन्त्र के योग से।

कुमार अगडदत्त ने अनेक वनेचरों के लिए यमराज के समान उस गजराज को, मणि और मन्त्र के योग से सर्प की तरह, अपने वश में कर लिया।

२४७. पुणरवि=फिर भी। नियदइयाए पुरओ=अपनी पत्नी के सामने। अवइण्णो=उतरा। रूढो=आरूढ, सवार। नियपुराहुत्तं=अपने नगर की ओर।

कुमार अगडदत्त अपनी पत्नी के सामने ही उस श्रेष्ठ हाथी के कन्धे से उतरा और फिर रथ पर सवार होकर अपने नगर की ओर चला।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२४८. केत्तियं=कितनी, थोड़ी। नियपियासहिओ=अपनी प्रियतमा के साथ। अद्धाणतडम्मि=रास्ते के किनारे पर। वग्घं=बाघ को। उवविट्ठं=बैठा हुआ।

कुमार अगडदत्त जब अपनी प्रियतमा के साथ कुछ ही दूरी को पार कर रहा था, तभी उसने रास्ते के किनारे बैठे हुए एक बाघ को देखा।

२४९. अद्धुसियकेसरसढं=जिसकी गरदन के बाल (अयाल) बहुत ही चमक रहे थे। अप्फालियवसुहदीहलंगूलं=जो अपनी लम्बी पूँछ जमीन पर पटक रहा था। पेच्छिऊण=देखकर। हसिऊणं=हँसकर। धाविओ=दौड़ा। समुहो=सामने।

जिसके अयाल केसर के समान चमकदार थे, और जो पृथ्वी पर अपनी लम्बी पूँछ पटक रहा था, ऐसे उस बाघ को देखकर कुमार अगडदत्त हँसा और उसकी ओर दौड़ा।

२५०. सज्जेउं रोद्दकमं=भयंकर आक्रमण के लिए तैयारी करके। नियकरपहारं=अपने पंजे के प्रहार को। वेंटियवत्थो=वस्त्रवेष्टित। हत्थो=हाथ। छूढो=घुसेड़ दिया। वयणम्मि=मुँह में।

जब बाघ भयंकर आक्रमण को साधकर अपने पंजे का प्रहार करने ही वाला था कि तभी कुमार अगडदत्त ने उस बाघ के मुख में कपड़ा लपेटा हुआ अपना (वायाँ) हाथ घुसेड़ दिया।

२५१. दाहिणहत्थेण=दाहिने हाथ से। असिधेणुयाए=तलवार और छुरी से। खंधम्मि=कन्धे पर। हओ=मारा। गाढपहारेण=गम्भीर प्रहार से। धसत्ति=धड़ाम से। महिमंडले=धरती पर। पडिओ=गिर पड़ा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फिर, कुमार अगडदत्त ने दाहिने हाथ से बाघ के कन्धे पर छुरी एवं बाण से गम्भीर प्रहार किया, जिससे वह पृथ्वी पर धड़ाम से गिर पड़ा।

२५२. निज्जिणिऊण=जीतकर। थोवयं=थोड़ा। गहणं=घना। संठियं=बैठा था। भुयंगं=भुजंग, भयानक सर्प। अद्धाणे=मार्ग में।

बाघ को जीतकर कुमार अगडदत्त जब थोड़े घने वन को लाँघ ही रहा था कि तभी उसने मार्ग में बैठे हुए एक भयानक सर्प को देखा।

२५३. अलिउलकज्जलवण्णं=भ्रमर-समूह के समान काले वर्ण-वाला। फणिमणिकिरणोहभासुरसरीरं=नागमणि की किरणों से चमकदार शरीरवाला। दोजीहं=दो जीभवाला। रत्तच्छं=लाल नेत्रवाला। धमणी=भाथी। पमुक्क-फुक्कारं=फुफकार छोड़नेवाला।

सर्प कैसा था : वह भ्रमर-समूह के समान काला था, फण पर स्थित मणि की कान्ति से उसका शरीर चमक रहा था, उसके दो जीभें थीं और नेत्र लाल थे तथा वह भाथी के समान फुफकार छोड़ रहा था।

२५४. गुरुभयकंपियदेहा=अत्यन्त भय के कारण कम्पित शरीर-वाली। सवडंमुहं=सामने की ओर। उवेंतं=आते हुए। सप्पं=सर्प को। लग्गा=लग गई। कंठम्मि=गले से।

सर्प को अपने सम्मुख आता हुआ देखकर मदनमंजरी अत्यन्त भय से काँपने लगी और कुमार अगडदत्त के गले से लग गई।

२५५. मा बीहेसु=भय मत करो। संदणाउ=रथ से। उत्तिण्णो=उतरा। सुहडो=उत्तम योद्धा। आवंतस्स फणिणो=आते हुए सर्प की। विहिओ=किया। गईथंभो=गति का स्तम्भ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

'मत डरो', इस प्रकार कहते हुए वह सुभट राजकुमार रथ से उतरा और आते हुए सर्प की गति को सहसा रोक दिया।

२५६. मुहथंभं काऊं=मुख को बन्द करके। खेल्लावेऊण=खेलाकर। छड्डिओ=छोड़ दिया। आरुहिऊण=सवार होकर। संजोइया=जोत दिया, हाँक दिया।

इसके बाद, कुमार अगडदत्त ने उस सर्प के मुख को बन्द कर तथा उसे खेलाकर छोड़ दिया और फिर रथ पर सवार होकर शीघ्र ही घोड़ों को जोत दिया (हाँक दिया)।

२५७. किच्छेण=बड़ी कठिनाई से। कहवि=किसी तरह। नरयसारिच्छं=नरक के समान। संपत्तो=पहुँचा। संतोसियनयरिजणनिवहो=नगर के लोगों को सन्तुष्ट करते हुए।

कुमार अगडदत्त नरक के समान उस घने वन को अत्यन्त कष्टपूर्वक जिस किसी तरह से पार कर, नागरिकों में सन्तोष उत्पन्न करता हुआ शंखपुर पहुँचा।

२५८. वरविहियवत्थसोहाउलम्मि नयरम्मि=श्रेष्ठ वस्त्रों से की गई सजावट की शोभा से परिपूर्ण नगर में। दिंतो=देता हुआ। पविट्ठो=प्रविष्ट हुआ।

श्रेष्ठ वस्त्रों द्वारा की गई सजावट की शोभा से परिपूर्ण सुन्दर नामक राजा की उस नगरी में लोगों के मन और नेत्रों को आनन्दित करता हुआ तथा दान देता हुआ वह कुमार अगडदत्त प्रविष्ट हुआ।

२५९. नियमंदिरम्मि=अपने घर में। पत्तो=पहुँचा। गरुयनेहेणं=अत्यन्त स्नेह से। सहरिसं=हर्षपूर्वक। लोएण=लोगों ने। ताहे=तब।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जब कुमार अगडदत्त अपने भवन में पहुँचा, तब उसके माता-पिता ने अत्यन्त स्नेह से हर्षपूर्वक उसका आलिगन किया और अन्य लोगों ने उसे प्रणाम किया।

२६०. भोयणावसाणे=भोजन के बाद। पुट्ठो=पूछा। देसंतराणं= दूसरे देशों के, देश-देशान्तरों के। वुत्तंत=वृत्तान्त। समग्गं= समस्त।

भोजन कर चुकने के बाद (माता पिता ने) अगडदत्त से देश-देशान्तरों के समाचार पूछे। उसने भी अपने घर वापस आने तक का समस्त वृत्तान्त उन्हें कह सुनाया।

२६१. तोस=सन्तोष वच्चइ=व्यतीत होने लगा। कालो= समय। रज्जसुहं=राज्यसुख। भुंजमाणाणं ताणं=उपभोग करते हुए उनके।

इस प्रकार, पुत्र के सुखद मिलन के कारण परम सन्तुष्ट उन माता-पिता और पुत्र का समय राज्यसुख भोगते हुए आनन्दपूर्वक व्यतीत होने लगा।

२६२. अन्नया=अन्य किसी समय। कामुयलोयाण=कामीजनों के लिए। बहुपउरपरियरजुओ=अनेक पुरवासियों और परिचरों (सेवकों) से युक्त। उज्जाणं=उद्यान। उवगओ=गया।

इसके बाद, अन्य किसी एक दिन, कामीजनों के हृदय को आनन्दित करने वाले वसन्त के आगमन पर वह राजा (सुन्दर) पुरवासियों और परिचरों (सेवकों) के साथ उद्यान (की यात्रा) में गया।

२६३. सुहिजणपरिवारिओ=सुहृद् जनों से घिरा। पियासहियो= प्रियतमा के साथ। पुरनारिपलोइयरूवसंपओ=पुरस्त्रियों से देखी गई रूपसम्पदा वाला। संपत्तो=पहुंचा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्पश्चात्, अपने सुहृद् जनों से घिरा, प्रियतमा (मदनमंजरी) के साथ, पुरस्त्रियों द्वारा देखी गई रूप—सम्पदा वाला कुमार वह अगडदत्त भी वहाँ (उस उद्यान में) पहुँचा।

२६४. विणोय=विनोद। वरनट्ट=श्रेष्ठ नृत्य। गेयकव्व=गीति-काव्य। कीलइ=क्रीड़ा करने लगा। पमुइयचित्तो=प्रमुदित्तचित्त।

विविध प्रकार के हास्य-तोष, वीणा-विनोद, श्रेष्ठ नृत्य एवं गीति-काव्यों से प्रमुदित चित्त वह कुमार अगडदत्त मदनमंजरी के साथ क्रीड़ा करने लगा।

२६५. अवरण्हे=अपराह्ण, दोपहर में। रमिऊण=मनोरंजन करके। भवणमणुपत्तो=भवन में लौट आया।

अपराह्ण में सभी लोग मनोरंजन करके शीघ्र ही नगर को वापस चले गये। समस्त परिवार से युक्त राजा भी अपने भवन में लौट आया।

२६६. विसज्जिय=विदा देकर, छोड़कर। डक्का=डँस ली गई उग्गेण उरगेण=भयंकर साँप के द्वारा।

समस्त परिजनों को विदा देकर कुमार अगडदत्त जब अपने श्रेष्ठ रथ के पास पहुँचा, तभी मदनमंजरी को एक भयकर सर्प ने डँस लिया।

२६७. हाहारवं=हाहाकार। कुणंती=करती हुई। कंपंतसयलगत्ता=काँपते हुए समस्त शरीरवाली। उच्छंगे=गोद में।

'मुझे सर्प ने डँस लिया है', इस प्रकार बार-बार कहती एवं विलाप-पूर्वक हाहाकार करती और सर्वांग से काँपती हुई मदनमंजरी कुमार अगडदत्त की गोद में जा गिरी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२६८. मा बीहेहि=भय मत करो। कुवलयदलच्छि=कमलदल की तरह आँखवाली। अप्पभवं=प्रभावहीन। निमेसमेत्तेण=क्षण भर में। काहामि=कर दूँगा।

तब, कुमार अगडदत्त ने कहा : "हे कमलदल के समान नेत्रवाली, भय मत करो। मैं विषधर (सर्प) के विष को क्षणभर में प्रभावहीन कर दूँगा।"

२६९. मुहुत्तमेत्तेण=मुहूर्त्त-मात्र में। विसमविसपीडियंगा=भयंकर विष से पीड़ित अंगवाली। निच्चेयणा=मूर्च्छित।

इस प्रकार कहते हुए कुमार अगडदत्त की, भयकर विष से व्यथित अंगवाली वह प्रियतमा मुहूर्त्त-मात्र में मूर्च्छित हो गई।

२७०. जीवियमुक्क त्ति=मर गई, ऐसा। वियाणिऊण=जानकर। मोहमावन्नो=मोह में पड़ गया। विलवइ=विलाप करने लगा।

'मदनमंजरी मर गई', ऐसा जानकर कुमार अगडदत्त भी मोह में पड़ गया और हाहाकार करता हुआ करुण-स्वर से विलाप करने लगा।

२७१. कह कह वि=जिस किसी तरह। किच्छेणं=कष्टपूर्वक। अत्ताणं=अपने को। संवरेवि=रोककर। रइऊण=रचकर। चियं=चिता।

कुमार अगडदत्त ने कष्टपूर्वक जिस किसी तरह से अपने (शोक) को रोककर, चिता बनाई और उसपर अपनी उस पत्नी को रख दिया।

२७२. पज्जालिऊण=जलाकर। जलणं=अग्नि को। खिवेइ=डाल देना चाहता है। गयणाओ=आकाश से। खयरजुयलं=दो विद्याधर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जब कुमार अगडदत्त (चिता में) अग्नि प्रज्ज्वलित कर अपने को उस (चिता) में डालने ही वाला था कि तभी अचानक आकाश से दो विद्याधर वहाँ आ पहुँचे।

२७३. संपत्तमेत्तएण=पहुँचते ही। वयणं=वचन। अत्ताण=अपने को। खिवसि=झोंकते हो। जलणम्मि=आग में।

वहाँ पहुँचते ही उन विद्याधरों ने कुमार अगडदत्त से अत्यन्त कोमल वचनों में इस प्रकार पूछा : "हे सत्पुरुष, तुम क्यों अकारण अपने को अग्नि में झोंक रहे हो ?"

२७४. सत्थसरीरं=स्वस्थ शरीर। पजंपिऊणं=कहकर। अहिमंतियजलेण=अभिमन्त्रित जल से। पहया=छींटे मारे।

"हम क्षणमात्र में ही तुम्हारी पत्नी को स्वस्थ शरीर कर देंगे।" इस प्रकार कहकर उन्होंने मदनमंजरी पर अभिमन्त्रित जल से छींटे मारे।

२७५. निद्दाखए=नींद टूटने पर। पसयच्छी=विशाल नेत्रवाली। कयरो=कौन-सा। पुच्छंती=पूछती हुई। उट्ठिया=उठ बैठी।

विशाल नेत्रवाली वह मदनमंजरी अपने को सँभालकर, जैसे नींद टूटने पर, जाग उठी और 'यह कौन-सा स्थान है ?' इस प्रकार पूछती हुई शीघ्र ही उठ बैठी।

२७६. उट्ठावेऊण=उठाकर। पणइणि=प्रियतमा, पत्नी को। जंपिय=कहकर। उप्पइयं=उड़ गये। गयणमग्गम्मि=आकाशमार्ग से।

तब, वे दोनों विद्याधर अगडदत्त की पत्नी को उठाकर (खड़ाकर) और कुमार के साथ बातचीत कर आकाशमार्ग से उड़कर चले गये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२७७ रयणीए=रात्रि में। अइतमंधपउराए=अत्यधिक घने अन्धकार की प्रचुरता के कारण। पच्चासन्ने=अत्यन्त समीप। देवयउलम्मि=देवकुल (मन्दिर) में। सहसच्चिय=अचानक ही।

रात्रि में अत्यधिक घने अन्धकार की प्रचुरता के कारण कुमार अगडदत्त अपनी प्रियतमा के साथ अत्यन्त समीप के एक देवमन्दिर में अचानक ही चला गया।

२७८. एत्थ समए=इसी समय। दइया=पत्नी। आणेमि=लाता हूँ। चिट्ठ=ठहरो। खणमेगं=एक क्षण।

इसी समय कुमार अगडदत्त ने अपनी पत्नी से प्रसन्न वाणी में कहा: "जब तक मैं अग्नि लाता हूँ, तबतक तुम (यहीं) एक क्षण के लिए ठहरो।"

२७९. नियत्तो=लौट आया। पेच्छइ=देखा। उज्जोयं=उद्योत, प्रकाश। मणचमक्कारं=मन को चमत्कृत करनेवाला।

इस प्रकार कहकर कुमार वहाँ से चला गया और फिर अग्नि लेकर शीघ्र ही वापस आ गया। उसी समय उसने उस देव-मन्दिर में मन को चौंका देनेवाला प्रकाश देखा।

२८०. संपत्तेण=पहुँचने पर। सासंकमाणसेणेवं=आंशकित मन से इस प्रकार। दीवुज्जोओ=दीपक का प्रकाश। दिट्ठो मे=मैंने देखा। आसि=था।

पहुँचते ही उसने आशंकित मन से अपनी पत्नी से इस प्रकार पूछा: "आर्ये मैंने इस मन्दिर में दीपक का कैसा प्रकाश देखा था?"

२८१. पडिभणियं=प्रत्युत्तर में कहा। हत्थट्ठियस्स=हाथ में स्थित। जलणस्स=अग्नि का। समुज्जोओ=प्रकाश। जलियस्स=ज्वाला का। संकंतो=प्रतिबिम्बित हुआ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तब, प्रत्युत्तर में उस (मदनमंजरी) ने कहा : 'हे प्रियतम, तुम्हारे हाथ में स्थित अग्नि की ज्वाला का प्रकाश प्रतिबिम्बित हुआ था, उसे ही तुमने (इस देव-मन्दिर में) देखा होगा।

२८२. खग्गं=तलवार। महिनिहियजाणुजुयलो=भूमि पर दोनों घुटनों को टिकाकर। अहोमुहो=मुँह नीचे करके। धमइ=फूँकता है।

इसी बीच, अपनी भार्या को तलवार देखकर वह कुमार अगडदत्त पृथ्वी पर दोनों घुटनों को टेककर तथा मुँह नीचे ले जाकर आग फूँकने लगा।

२८३. कोसपरिहीणं=म्यान से रहित। हत्थाउ=हाथ से। अइ-गरुयनिहाएणं=बहुत बड़े आघात से। पडियं=गिर पड़ी। देवउलसिलापट्टे=मन्दिर के शिलापट्ट (पथरीले फर्श) पर।

तभी अचानक ही (मदनमंजरी के) हाथ से म्यानरहित तलवार बहुत बड़े आघात के साथ देव-मन्दिर के शिलापट्ट पर गिर पड़ी।

२८४. संभंतो=हड़बड़ाकर। नियदइयं=अपनी पत्नी से। कोस-विप्पमुक्कं=म्यान से मुक्त। महियलम्मि=पृथ्वीतल पर।

तभी, सरल स्वभाव वाले कुमार अगडदत्त ने हड़बड़ाकर अपनी पत्नी से पूछा : "म्यानरहित यह तलवार धरती पर कैसे गिर पड़ी ?"

२८५. मह=मेरा। मणमोहो=मन का मोह। उच्छलिओ=उत्सुक हो उठा, उछल पड़ा। तेणं=इसी कारण। परव्वसाए=विवश होकर। नवरि=केवल।

तब उस (मदनमंजरी) ने कहा : "मेरे मन का (नंगी तलवार देखने का) मोह अत्यन्त उत्सुक हो उठा। केवल इसी कारण विवश (मेरे हाथ से) म्यानरहित तलवार गिर गड़ी है।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२८६ जालेवि=जलाकर। बोलिऊण=बिताकर। गोसम्मि=प्रातः-काल में। साणंदहियया इ=आनन्दित हृदय से।

अग्नि को जलाकर तथा देव-मन्दिर में वह रात्रि बिताकर, प्रातः काल (कुमार अगडदत्त) हृदय से आनन्दित होता हुआ अपने घर चला गया।

२८७. बंधवसुहिसयणाणं=बन्धु, सुहृद् और स्वजनों को। रयणि-पउत्ती=रात्रि का वृत्तान्त। निव्विसेसा=समस्त। रहस-वसुल्लसियहियएणं=हर्षवश उल्लसित हृदय से।

(कुमार अगडदत्त ने) अपनी प्रियतमा के साथ बन्धुवर्ग, मित्र और परिवार को उस रात्रि का समस्त समाचार हर्षवश उल्लसित हृदय से कह सुनाया।

२८८. दोण्ह वि=दोनों ही। हिययसमीहियविलाससत्ताणं=हृदय से इच्छित विलास के अनुकूल। सुहेण=सुखपूर्वक।

इस प्रकार, वे दोनों ही (अगडदत्त और मदनमंजरी) हृदय से इच्छित विलास के अनुकूल विषयसुख का सेवन करते हुए अपना समय सुखपूर्वक व्यतीत करने लगे।

२८९. कयाई=किसी समय। सप्पुरिसो=सज्जन पुरुष। विवरीय-सिक्खतुरयं=विपरीत शिक्षा प्राप्त घोड़े को। वाहियालीए=अश्वशाला से।

इसके वाद, अन्य किसी एक दिन, वह सत्पुरुष राजकुमार (अगडदत्त) अश्वशाला से विपरीत शिक्षाप्राप्त (दुष्ट) घोड़ा लेकर उसकी सवारी करने लगा।

२९०. दुट्ठहरिणा=दुष्ट घोड़े ने। उव्वाहरिऊण=अपहरण कर, उड़ाकर। लोयपच्चक्खं=लोगों के सामने से। अइविसमे=अत्यन्त भयंकर। रण्णे=जंगल में। तावसनिवासे=तपस्वी के आश्रम में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वह दुष्ट घोड़ा लोगों के सामने से कुमार अगडदत्त को ले उड़ा और एक अत्यन्त भयंकर वन में, किसी तपस्वी के आश्रम में जा पहुँचा।

२९१. परिभममाणेण=घूमता-भटकता हुआ। जिणहरं=तीर्थंकर का मन्दिर। चारणसमणो=आकाशगामी श्रमण साधु। बहुमुणि-गणाइण्णो=अनेक मुनियों से घिरे हुए।

घूमता-भटकता हुआ कुमार अगडदत्त एक जिन-मन्दिर में पहुँचा वहाँ उसने अनेक (पाँच) मुनियों से घिरे एक आकाशगामी श्रमण साधु को देखा।

२९२-२९३. गहनक्खत्ताणं=ग्रह-नक्षत्रों के बीच। ससहरो=चन्द्रमा। रयणाण=रत्नों के बीच। कोत्थुहमणि=कौस्तुभ मणि। सहस्सनयणो=इन्द्र। खंती=क्षमा। दित्ति=दीप्ति। मित्तो=सूर्य वम्महो=मन्मथ, कामदेव। चउनाण=चार ज्ञान।

ग्रह-नक्षत्रों में चन्द्रमा के समान, रत्नों में कौस्तुभ मणि के समान, वृक्षों में कल्पवृक्ष के समान, देवों में इन्द्र के समान, सौम्यभाव में चन्द्रमा के समान, क्षमा में पृथ्वी के समान, दीप्ति में सूर्य के समान, और रूप में कामदेव के समान वह (साधु) निर्मल चार ज्ञानों (मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, एवं मनःपर्ययज्ञान) से सम्पन्न थे।

२९४. विज्जावसदिट्ठविस्सववहारो=विद्या को सिद्धि के कारण विश्व के समस्त व्यवहार को देखनेवाला। बोहेंतो=प्रति-बोधित करता हुआ। भवियजणे=भव्यजनों को।

उन साधु का नाम सहस्रगति था, जो विद्या की सिद्धि के कारण विश्व के समस्त व्यवहार को देखनेवाले थे और अपने निर्मल धर्मोपदेश द्वारा भव्यजनों को प्रतिबोधित कर रहे थे।

२९५. लद्धासीसो=आशीर्वाद प्राप्त करके। उवविट्ठो=बैठा। पासम्मि=पास में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुमार अगडदत्त ने अचानक वहाँ जाकर साधु के चरणकमलों को प्रणाम कर उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया तथा उनके पास ही बैठ गया।

२९६. विणयपत्तेणं=विनयगुण को प्राप्त। सकोउग्रो=कौतूहलवश। सुहगुरु=शुभगुरु। साहसु=कहें।

अवसर पाकर उस कुमार अडगदत्त ने विनयपूर्वक उनसे कहा: "हे शुभगुरु, कौतूहलवश मैं जो कुछ पूछता हूँ, कृपाकर उसका उत्तर मुझे दें।

२९७. जोव्वणलायण्णरूवपडिहत्था=यौवन, लावण्य (लुनाई) और रूप से सम्पन्न। वेरग्गमग्गपडिया=वैराग्य-मार्ग में पड़कर। वयगहणं=व्रत का ग्रहण।

"हे प्रभो, यौवन, सौन्दर्य एवं रूप से सम्पन्न (आपको घेरकर बैठे) ये सत्पुरुष (पाँच मुनि) कौन हैं? वैराग्य-मार्ग में पड़कर ये पाँचों ही व्रत लेने की इच्छा क्यों कर रहे हैं?

२९८. विसय=देश। विसमपल्ली=भयानक बस्ती। भुज्जइ=भोगता है, शासन करता है। बलवंतो=बलशाली।

ज्ञानी साधु ने उत्तर दिया: "इसी देश में चमरी नाम की भिल्लों की एक भयानक बस्ती है। वहाँ धरणीधर नाम का बलशाली भिल्ल शासन करता था।

२९९. हय=घोड़ा। गय=हाथी। रह=रथ। जोह=योद्धा। सुहड=सुभट। परियरिग्रो=युक्त।

इसके बाद, किसी एक दिन घोड़े, हाथी, रथ, योद्धा और सुभटों से युक्त एक राजकुमार उसकी भूमि में आया।

३००. हयविहयं=क्षत-विक्षत। ग्राढत्तो=प्रारम्भ किया। संगामो=संग्राम, युद्ध। सरिसो=सदृश, समान।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तब, उस भिल्लराज ने उसी क्षण राजकुमार के शिविर को क्षत-विक्षत करके अपने ही समान बलवान् उस (राजकुमार) के साथ युद्ध करना प्रारम्भ किया।

३०१. भिडिया=भिड़े रहे। महइं वेलं=बहुत समय तक। तीरए छलिउं=छल (मार) नहीं सके। निययजाया=अपनी पत्नी। पुरओ=सामने।

बहुत समय तक भिड़े रहने पर भी जब एक दूसरे को न मार सके, तब राजकुमार ने शृंगार की हुई अपनी पत्नी को (उस भिल्लराज के) सामने कर दिया।

३०२. वम्मह=कामदेव। पेसिया=भेजी, डाली। छिद्दं=घात, मौका। हओ=मारा, प्रहार किया। मम्मे=मर्मप्रदेश में।

कामदेव के चित्त को भी अपहृत करनेवाली उस सुन्दरी पर जब उस भिल्लराज ने दृष्टि डाली, तभी मौका पाकर कुमार ने उसके मर्मस्थल पर प्रहार किया।

३०३. वहिऊण=वध करके। पवसिओ=प्रस्थान किया। भायरो=भाई। तुरियं=शीघ्र।

भिल्लराज को मारकर वह कुमार अपनी प्रियतमा के साथ जब प्रस्थित हुआ, तभी उस भिल्लराज के ये पाँचों (छोटे) भाई शीघ्र ही वहाँ आ पहुँचे।

३०४. जीयविमुक्कं=प्राणरहित। भायरं जेट्ठं=बड़े भाई को। अमरिसवस-फुरफुरंतोट्ठा=क्रोध के कारण फड़कते होंठ-वाले। रहमग्गेणं=रथमार्ग से।

अपने ज्येष्ठ भाई को बाण के प्रहार से प्राणरहित देखकर ये पाँचों भाई क्रोध से होंठ फड़फड़ाते हुए रथमार्ग से चले।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३०५. जोयंता=खोजते हुए। चिट्ठंति=ठहर गये। छिड्डं=अवसर। कुमारपरियरिओ=कुमारों (युवाओं) से घिरा।

शंखपुर पहुँचे हुए इन पाँचों भाइयों ने वहाँ उस राजकुमार को कुमारों (युवाओं) से घिरा हुआ देखा, और ये उसे मारने का अवसर खोजते हुए वहीं एक देव-मन्दिर में ठहर गये।

३०६. मुक्कसयलपरिवारो=समस्त परिवार से अलग होकर। नियजायाइ समेओ=अपनी पत्नी के साथ।

इसके बाद, अन्य किसी एक दिन, इन पाँचों ने उस कुमार को उद्यान में समस्त परिवार से अलग अपनी पत्नी के साथ अकेला ही देखा।

३०७. वहणोवायं=वध करने का उपाय। किलिट्ठपरिणामा=दुष्ट भावनावाले। दट्ठा=डँस लिया। दुट्ठेण भुयगेण=दुष्ट साँप ने।

जब ये अपने बुरे परिणामों के कारण उस कुमार के वध करने का उपाय सोच रहे थे कि तभी अचानक ही उस कुमार की पत्नी को एक दुष्ट साँप ने डँस लिया।

३०८. गयजीयं=प्राणरहित। अप्पाणं=अपने को। जलणम्मि=आग में। खिवेइ=झोंकता है। सत्थोकया=स्वस्थ बनाया।

जब कुमार अपनी पत्नी को प्राणरहित जानकर उसके साथ अपने को भी (चिता की) अग्नि में झोंक रहा था कि तभी दो विद्याधर वहाँ पहुँचे और उन्होंने उसकी पत्नी को स्वस्थ कर दिया।

३०९. चइऊण=छोड़कर। पच्चासन्ने=निकटवर्ती। मोत्तूण=छोड़कर। मयच्छि=मृगाक्षी को।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उस उद्यान को छोड़कर वे दोनों (पति-पत्नी) निकट के देव-मन्दिर में गये। थोड़ी देर बाद कुमार उस मृगाक्षी (पत्नी) को वहीं छोड़ अग्नि लाने के लिए चला गया।

३१०. लद्धछला = छलपूर्वक। गरुयतोसमावन्ना = अत्यन्त सन्तुष्ट। पच्छन्ना = छिप गये। वहणकरणुज्जयमणा = वध करने को उद्यत मन वाला।

इस प्रकार, ये पाँचों ही आदमी छल करने का अवसर पाकर अत्यन्त सन्तुष्ट हुए और कुमार के वध के लिए उद्यत-मन से छिपकर उसी देव-मन्दिर में रुक गये।

३११. कणिट्ठेण = छोटे भाई ने। चिरगोवियदीवग्रो = बड़ी देर से छिपाये हुए दीपक को। समुग्गाओ = डिब्बे से। पयडीकओ = प्रकट किया।

(भिल्लराज के) इन (पाँचों) छोटे भाइयों ने उसी समय, बहुत देर से छिपाये हुए दीपक को डिब्बे से निकालकर अचानक ही उस देव-मन्दिर में प्रकाशित कर दिया।

३१२. दीवुज्जोएण = दीपक के प्रकाश से। बालाइ = बाला (युवती)। ताण = उनमें। लहुभाया = छोटा भाई। पलोइओ = देखा। सोमदिट्ठीय = सौम्य दृष्टि से।

दीपक के उस प्रकाश में उस बाला (युवती) ने इन पाँचों में सबसे छोटे भाई को अत्यन्त स्नेहपूर्ण और सौम्य दृष्टि से देखा।

३१३. वुत्तो = कहा। होसु = बन जाओ। सुयणु = सुतनु, सुन्दर। भत्तारो = पति। झायसि = ध्यान करोगे।

तभी उस बाला (युवती) ने उस (सबसे छोटे भाई) से कहा : 'हे सुन्दर, तुम मेरे पति हो जाओ। यदि तुम मुझे छोड़कर किसी अन्य का ध्यान करोगे तो मैं अपनी जान दे दूँगी।'

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३१४. मुद्धे=मुग्धे ! इच्छामइं=चाहता हूँ । सव्वहा=बिलकुल । भत्ता=स्वामी, पति । जीयं=जीव, प्राण ।

तब उस (भाई) ने उस बाला से कहा : 'हे मुग्धे, मैं भी तुमको चाहता हूँ; लेकिन यदि तुम्हारा पति इस बात को जानेगा, तो वह मुझे बिलकुल जीवित न छोड़ेगा ।'

३१५. सुहय=सुभग, सुन्दर । वावाइस्सामि=मार डालूँगी । पच्चक्खं=प्रत्यक्ष, सामने । पजंपिऊणं=कहकर । पइवश्रो= प्रदीप । झंपिश्रो=ढक दिया ।

तब उस बाला ने कहा : 'हे सुन्दर, मैं तुम्हारे सामने ही अपने पति को मार डालूँगी ।' यह कहकर उसने शीघ्र ही दीपक को ढक दिया ।

३१६. वण्हि=श्रग्नि को । घेत्तूण=लेकर । संपत्तो=श्रा पहुँचा । संपत्तेण=पहुँचते ही । उज्जोश्रो=प्रकाश ।

इसी बीच वह कुमार आग लेकर शीघ्र ही (वहाँ) आ पहुँचा । आते ही उसने (चौंककर) बाला से कहा : 'मैंने यहाँ प्रकाश देखा है !'

३१७. भणियमिणं=यह कहा । करगहियस्स=हाथ में ली हुई । जलियजलणस्स=जलती श्राग का । संकंतो=प्रतिबिम्बित ।

तब उस (बाला) ने कहा : 'हे प्रिय, अपने हाथ में स्थित प्रज्ज्वलित अग्नि का प्रतिबिम्बित प्रकाश ही तुमने इस देव-मन्दिर में देखा है ।'

३१८. दीवेइ=जलाता है । हुयवयं=श्रग्नि को । कड्ढिय=निकाल-कर । गीवाए=गरदन पर । मुंचए पहरं=प्रहार करने को तैयार हुई ।

जब कुमार अपनी (म्यानयुक्त) तलवार उस बाला को सौंपकर अग्नि को प्रज्ज्वलित कर रहा था कि तभी वह बाला तलवार को म्यान से निकालकर कुमार की गरदन पर प्रहार करने को तैयार हो गई ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३१९. एएण=इस। करुणमइणा=दयालु। अवहत्थेऊण=हाथ का झटका देकर। पाडियं=गिरा दिया। सिट्ठं=कहा।

तब इस दयालु (पाँचों में सबसे छोटे भाई) ने अपने हाथ का झटका देकर उस तलवार को दूर गिरा दिया और स्त्री के इस अतिशय विचित्र चरित्र को अपने सहोदर भाइयों से कह सुनाया।

३२०. नाऊण=जानकर। अइदारुण=अत्यन्त भयानक। विलसियं=चेष्टा को। निरावेक्खं=निरीह भाव से।

उस स्त्री की अत्यन्त भयानक चेष्टा को निरीह भाव से जानने के बाद ये पाँचों भाई वैराग्यभाव को प्राप्त होकर मेरे पास आये हैं।"

३२१. आयण्णिय=सुनकर। माणसम्मि=मन में। संभंतो=आश्चर्य-चकित। परिभावइ=सोचने लगा।

(श्रमण साधु सहस्रगति से) अपना ही चरित सुनकर कुमार अगडदत्त अपने मन में आश्चर्यचकित हुआ और सोचने लगा — "ओह, देखो तो, महिलाओं का चरित्र कितना भयंकर होता है!"

३२२. गंगाए=गंगा नदी की। वालुयं=बालू को। हिमवओ=हिमालय का। याणंति=जानते हैं।

यह सत्य ही है कि गंगा की बालू, सागर का जल और हिमालय-पर्वत का परिमाण बुद्धिमान् पुरुष भले ही जान लें, किन्तु महिलाओं के हृदय को वे नहीं जान सकते।

इसलिए, इस संसार को धिक्कार है! यहाँ कुछ भी सुख का कारण नहीं है।

३२३. विहवे=वैभव। परियट्टंत=परिवर्तित। सुह=सुख। कत्तो=कहाँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक क्षण पूर्व देखा गया वैभव भी अगले क्षण नष्ट हो जाता है। एक क्षण पूर्व के विविध सुख अगले ही क्षण दुःख में बदल जाते हैं। क्षण भर पूर्व का संयोग भी वियोग बन जाता है। अरे, इस संसार में सुख है कहाँ ?

इस प्रकार विचार करता हुआ वह (अगडदत्त) वैराग्य से भर उठा। भगवान्, सहस्रगति के चरणों में गिरकर उसने प्रार्थना की : "हे भगवन्, आपके द्वारा कथित यह तो मेरा ही चरित है। मैं ही इन (पाँचों) के (ज्येष्ठ) भाई (भिल्लराज) का घातक हूँ। अब तो इस संसार में रहते-रहते मैं उद्विग्न हो उठा हूँ। अतः, मुझे व्रत प्रदान करने का अनुग्रह करें।" श्रमण साधु द्वारा दीक्षित वह (अगडदत्त) कष्टसाध्य श्रामण्य का यथाविधि पालन करने लगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तरी

१. प्रश्न : पठित ग्रन्थ के आधार पर अगडदत्त-कथा का मूल्यांकन करें।

उत्तर : प्राच्य भारतीय वाङ्मय में अगडदत्त-कथा एक अतिशय रमणीय लोककथा है। इसमें साहसिक प्रेमकथा के प्रमुख रूप उपलब्ध हैं। नारी के अन्तर्बाह्य चरित्र का भी इसमें सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। इस कथा-काव्य में **अगडदत्त** एवं **मदनमंजरी** के अतिरिक्त भुजंगम चोर, भिल्लपति एवं दुर्योधन चोर जैसे पात्र भी अपना विशेष महत्त्व रखते हैं; क्योंकि उन्होंने जहाँ एक ओर कथा को संघर्षशील एवं रोचक बनाया है, वहीं दूसरी ओर कथा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान भी किया है।

इस कथा का नायक **अगडदत्त** घोर संघर्षों के बीच भी आशावादी, एकाकी होने पर भी अदम्य साहसी, पराक्रमी, चतुर तथा मधुरभाषी होने के कारण युग–युग से जनता–जनार्दन में अत्यन्त लोकप्रिय रहा है। यही कारण है कि लोक-कहावतों एवं मुहावरों में भी उसका नाम प्रचलित मिलता है। असम्भव कार्य को भी सम्भव कर देने वाले किसी व्यक्ति को हम सहज ही 'अगड़धत' कह देते हैं। वस्तुतः, यह 'अगड़धत' और कोई नहीं, प्रस्तुत काव्य-कथा का नायक 'अगडदत्त, ही है।

प्राचीन काल की मौखिक एवं लिखित लोककथाओं में यत्र-तत्र बिखरे, अगडदत्त-कथा के बीजों को समेटकर तीसरी-चौथी सदी के महान्, प्राकृत-गद्य लेखक **आचार्य संघदास गणी** ने अपनी रचना 'वसुदेवहिण्डी' में इस कथा को सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप प्रदान किया, और फिर उसी आधार पर **आचार्य शान्तिसूरि** ने 'उत्तराध्ययनसूत्र' (चौथे सूत्र की छठी गाथा की टीका) में इसका अंकन किया। उसी के आधार पर १२वीं सदी के **आचार्य देवेन्द्र गणी** (अपर नाम **नेमिचन्द्र सूरि**) ने इसे और भी अधिक रोचक एवं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशद बनाया। उन्होंने इस कथानक को घटना-प्रधान, अलौकिक, चमत्कारपूर्ण, अत्यधिक सरस एवं मार्मिक तो बनाया ही, साथ ही रस, अलंकार एवं रीति और गुणों से भी समन्वित कर इसे एक सुन्दर अलंकृत काव्य का भी रूप प्रदान किया।

प्रस्तुत कथानक के माध्यम से कवि **देवेन्द्र गणी** ने इस सिद्धान्त की स्थापना की है कि व्यक्तित्व एवं चरित्र से विहीन मानव भी योग्य परिस्थिति एवं वातावरण प्राप्त कर उन्नति की चरम सीमा पर पहुँच सकता है। प्रारम्भ में अगडदत्त एक आवारा, अज्ञानी, और धूर्त्त युवक के रूप में हमारे सम्मुख आता है, पर 'संगत से गुण होत है' की कहावत के अनुसार, वाराणसी में एक सद्‌गुरु का सम्पर्क प्राप्त होते ही उसका जीवन सर्वथा परिवर्त्तित हो जाता है और वह कर्त्तव्यनिष्ठ, कष्टसहिष्णु, अथक परिश्रमी, दयालु एवं सदुद्देश्य की सिद्धि के हेतु 'शरीरं पातयामि कार्यं साधयामि वा' का सिद्धान्त अपनाते हुए दृष्टिगोचर होता है।

वर्त्तमान युग-सन्दर्भों में यह रचना अपना विशेष महत्त्व रखती है। इसका कथानक अत्यन्त सरल, सरस एवं मार्मिक होने के साथ ही चरित्र–निर्माण में सहायक, सत्कार्य–प्रेरक एवं विचारोत्तेजक है, जिससे इसकी उपादेयता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

'अगडदत्तकहा' की भाषा महाराष्ट्री–प्राकृत है। किन्तु, यह सेतुबन्ध', 'गउडवहो', 'लीलावई' प्रभृति महाकाव्यों की महाराष्ट्री–प्राकृत से कुछ भिन्न है। वस्तुतः, यह रचना तत्कालीन छात्र–समुदाय के चरित्र–निर्माण की दृष्टि से लिखी गई होगी, जो आज भी उस उद्देश्य की पूर्त्ति में समर्थ है।

२. प्रश्न : मूल-पाठ के आधार पर अगडदत्तकहा की कथावस्तु प्रस्तुत करें।

उत्तर : १. **शंखपुर** नामक नगर में सुन्दर नाम का एक राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम **सुलसा** था। उसके गर्भ से **अगडदत्त** नामका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुत्र उत्पन्न हुआ। वह बालक क्रमशः युवावस्था को प्राप्त हुआ। कुसंगति के कारण वह धर्म-दयारहित, अविनीत, असत्यवादी, व्यभिचारी और अहंकारी हो गया। वह आवारागर्दि करता हुआ इधर-इधर घूमा करता था। अतः, नगरवासी साहस कर एक दिन राजदरबार में गये और निवेदन किया : 'हे महाराज! कुमार ने अपने कार्यों से पूरे नगर को अस्तव्यस्त कर दिया है। अब आपही हमारे रक्षक हैं।'

२. राजकुमार के कुकृत्यों को सुनकर राजा **सुन्दर** बहुत क्रुद्ध हुआ और उसने अपने पुत्र को राज्य से निकाल देने की घोषणा की। निकाले जाने का आदेश मिलने पर कुमार अगडदत्त एकमात्र अपनी तलवार के भरोसे वाराणसी की ओर चल पड़ा। भयानक वन, पर्वत और नदियों को पार करता हुआ वह वाराणसी नगरी में पहुँचा। इस अतिशय श्रेष्ठ नगरी से अपरिचित रहने के कारण वह किंकर्त्तव्यविमूढ होकर इधर-उधर भटकने लगा।

३ आगे बढ़ने पर उसे सड़क के किनारे कुछ राजकुमार शिष्यों के साथ खड़ा एक विद्वान् गुरु दिखाई पड़ा। उसका नाम **पवनचण्ड** था। वह राजकुमारों को हाथी, घोड़े और रथ के संचालन की विद्या के साथ-साथ विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलाने की भी शिक्षा देता था। कुमार अगडदत्त ने उसके चरणों में गिरकर साष्टांग प्रणाम किया। गुरु ने प्रभावित होकर उससे पूछा : "तुम कौन हो और कहाँ से आये हो?"

अगडदत्त ने एकान्त में अपना समस्त यथार्थ वृत्तान्त गुरु से कह सुनाया। अगडदत्त के सत्य और स्पष्ट वार्त्तालाप से गुरु **पवनचण्ड** बहुत प्रसन्न हुए और उसे योग्य समझकर अपना शिष्य बना लिया। वह उसे अपने घर ले गये और सबको अपना भतीजा बताकर उसके रहने की व्यवस्था अपने यहाँ कर दी। कुमार अगडदत्त भोजन आदि की समस्त सुविधाओं की प्राप्ति के बाद विविध प्रकार की कला और विद्याओं का अभ्यास करने लगा। अगडदत्त ने गुरु की कृपा और अपने परिश्रम से बहत्तर कलाओं को थोड़े ही समय में सीख लिया। वह प्रतिदिन गुरु के उद्यान में बैठकर विद्याभ्यास किया करता था।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४. उस उद्यान के समीप ही नगर के प्रधान सेठ का सुन्दर भवन था। उस सेठ की **मदनमंजरी** नाम की एक रूपवती कन्या थी। एक दिन उस कन्या ने अपने भवन की छत से कुमार अगडदत्त को देखा और उसके सौन्दर्य से मुग्ध होकर उससे प्रेम करने लगी। एक दिन उसने कुमार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए अशोक का गुच्छा उसपर फेंका, जिससे अध्ययन में संलग्न कुमार का ध्यान मदनमंजरी की ओर गया। एक ही दृष्टि में उसे देखकर कुमार सोचने लगा : 'यह देवांगना है या नागकन्या ? यह लक्ष्मी है या साक्षात् सरस्वती ?' फिर, कुमार ने उससे पूछा : 'तुम कौन हो और क्या चाहती हो ? मेरे विद्याभ्यास में क्यों विघ्न डालती हो ?'

तब मदनमंजरी ने कहा : "मैं इस नगर के प्रधान सेठ **बन्धुदत्त** की पुत्री हूँ और मेरा विवाह भी इसी नगर में हुआ है। कामदेव के समान सुन्दर तुम्हें जिस दिन से देखा है, उसी दिन से मेरी नींद चली गई है, भोजन रुचिकर प्रतीत नहीं होता और सिर में अपार वेदना बनी रहती है। मैं तुमसे प्रेम करती हूँ। जबतक तुम मुझे स्वीकार नहीं करोगे, मैं स्वस्थ नहीं हो सकती। तुम विश्वास करो कि तुम्हारे अभाव में मेरा जीवित रहना असम्भव है।" कुमार अगडदत्त ने उसे आश्वासन दिया और कहा कि जब मैं विद्या समाप्त कर इस नगरी से जाने लगूँगा, तब तुम्हें अपने साथ ले चलूँगा।

५. एक दिन जब वह कुमार अगडदत्त घोड़े पर सवार होकर राजमार्ग से जा रहा था, तभी उसने कोलाहल सुना। थोड़ी ही देर में उसने देखाकि एक मदोन्मत्त हाथी लोगों को रौंदता हुआ दौड़ रहा हैं। नगर में चारों ओर भगदड़ मच गई है। कुमार घोड़े से उतरा और उसने उस पागल हाथी को ललकारा। अपना अपमान समझकर हाथी कुमार पर झपटा। कुमार ने अपनी चादर गोलकर हाथी की ओर फेंका, जिससे वह उलझ पड़ा। अवसर पाकर उसने उसकी पीठ पर एक घूँसा जमाया और उस पर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सवार होकर उसे खेलाते-खेलाते मदहीन कर दिया। हाथी को वश में करने का समाचार सुनकर राजा उस कुमार से बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपने यहाँ बुलवाया और उसका समस्त परिचय प्राप्त किया।

६. संयोग से उसी समय नगर के कुछ प्रमुख व्यक्ति राजा के पास पहुँचे और अभिवादन कर उन्होंने निदेदन किया कि महाराज ? कोई चोर हम-लोगों का धन रात में चुरा ले जाता है। उसने सारे नगर को दरिद्र बना दिया है। प्रतिदिन किसी-न-किसी व्यक्ति के घर चोरी हो रही है। राजा ने **नगररक्षकों** को कड़ी आज्ञा देकर चोरी रोकने के लिए सतर्क किया था, फिर भी, चोरी वन्द न हो सकी थी। नागरिकों की बात सुनकर कुमार अगडदत्त ने राजा से निवेदन किया कि महाराज, आप मुझे आज्ञा दें, तो मैं चोर को सात दिन के भीतर पकड़कर ला दूँगा और यदि न ला सका, तो स्वयं अग्नि में प्रविष्ट होकर जल मरूँगा।

राजा की अनुमति से अगडदत्त चोर की तलाश में घूमने लगा। उसने चोरों के अड्डों को घूम-घूमकर देखा, पर कहीं भी उस चोर का पता नहीं चला। प्रतिज्ञा किये उसे छह दिन बीत गये। सातवें दिन सन्ध्या समय नगर के बाहर सुनसान बगीचे में बैठा हुआ वह सोचने लगा कि अब तो अग्नि में जलकर मरना ही है। क्या मैं यहाँ से अपने नगर को चला जाऊँ या कहीं अन्यत्र भाग जाऊँ ? चोर का कहीं पता नहीं लगा, अब सन्ध्या होने में देर नहीं है।

७, राजकुमार **अगडदत्त** इस प्रकार चिन्तामग्न बैठा हुआ था कि एक परिव्राजक (संन्यासी) काषाय-वस्त्र पहने हुए, मुण्डित सिर, हाथ में त्रिदण्ड लिये कुछ गुनगुनाता हुआ उपस्थित हुआ। ऊसकी वेश-भूषा और रहन-सहन से कुमार ने उसे चोर समझा। वह आगन्तुक पुरुष कुमार से मधुर वचनों में बोला : "भाई, तुम कौन हो और यहाँ किस कार्य से बैठे हो ?" चतुर कुमार ने उत्तर दिया : "मैं गरीबी से पीड़ित होकर चिन्तामग्न हूँ। सोच रहा हूँ कि भरण-पोषण के निमित्त कोई कार्य मिल जाय।" आगन्तुक ने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहा : "पुत्र ! चिन्ता मत करो, आज ही मैं तुम्हारी दरिद्रता दूर कर दूँगा।" तव कुमार प्रसन्न होकर बोला : "आपकी अनुकम्पा से मेरी दरिद्रता दूर हो जायगी, तो मैं आपका जीवन भर आभारी रहूँगा।"

८. इसी प्रकार बातचीत करते-करते रात्रि आ गई। जब अँधेरा हो गया, तब वह आगन्तुक तलवार निकालकर शीघ्रतापूर्वक नगर की ओर चलने लगा और कुमार से बोला : "तुम भी मेरे पीछे-पीछे आओ, आज तुम्हारी इष्टसिद्धि हो जायगी।" परिव्राजक ने नगर में पहुँचकर एक धनिक वैश्य के घर में सेंध लगाई और कीमती वस्तुओं की पेटिकाएँ निकाल-निकालकर बाहर रखने लगा। उसने कुमार से कहा : "तुम यहीं रहो, मैं निकट के देवमन्दिर से कुछ मजदूरों को बुलाकर लाता हूँ।,' यह कहकर वह कुछ मजदूरों को बुला लाया और उनके सिर पर सामान की पेटिकएँ रखवाकर नगर से बाहर निकल गया। वे सभी जब एक पुराने बगीचे में पहुँचे, तब थककर रात्रि बिताने के लिए वहीं सो गये। उस परिव्राजक ने उठकर तलवार से उन सामान ढोनेवालों को मार डाला। वह कुमार को भी मारने का प्रयत्न करने लगा। पर, कुमार पहले से ही सावधान था, अत: दोनों में युद्ध होने लगा। कुमार की तलवार के वार को वह परिव्राजक सह न सका। उसकी टांगें कट जाने से वह घायल होकर भूमि पर गिर पड़ा। अन्त समय में अपना परिचय देते हुए वह बोला :

९. "मेरा नाम **भुजंगम** चोर है। श्मशानभूमि में जमीन के नीचे मेरा भवन है। **वीरमती** नाम की मेरी बहन है। तुम बरगद के वृक्ष के नीचे जाकर उसको बुलाना। तब वह तलघर का दरवाजा खोल देगी। तुम उसके साथ विवाह कर लेना और मेरा समस्त धन लेकर या तो वहीं सुखपूर्वक रहना या कुछ दिन वहाँ रहकर अपनी इच्छा के अनुसार चले जाना।"

१०. भुजंगम चोर के निर्देशानुसार वह श्मशानभूमि में पहुँचा और सांकेतिक स्वर से उसने वीरमती से तलघर का दरवाजा खुलवाया। वीरमती ने उसका स्वागत किया और भाई का घातक समझकर उससे बदला लेना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चाहा। उसने कुमार को एक पलंग पर सुला दिया और स्वयं ऊपर के कक्ष में चली गई। यह देखकर कुमार सोचने लगा कि 'मुझे यहाँ सुलाने में अवश्य ही कोई रहस्य है। अतः, मैं यहाँ से हटकर दूर चला जाता हूँ'।

११. इसी बीच उस वीरमती ने छत के ऊपर से मशीन द्वारा एक विशाल चट्टान उस पलंग पर गिराई, जिससे पलंग चूर-चूर हो गया। वह हँसती हुई नीचे आई, पर कुमार को उसने एक कोने में हँसते हुए देखा। कुमार ने उस विश्वासघातिनी के बाल पकड़ लिये और उसे वह राजा के पास ले आया। राजा से उसने भुजंगम चोर की सारी कथा कह सुनाई और उसकी बहन वीरमती को न्याय के लिए राजा को सौंप दिया। राजा ने चोर के घर से प्राप्त धन नागरिकों को वापस दिला दिया और प्रसन्न होकर कुमार के साथ अपनी कन्या **कमलसेना** का विवाह करा दिया, साथ ही दहेज में कुमार को एक हजार श्रेष्ठ गाँव, सौ हाथी, एक लाख पैदल सेना, दस हजार घोड़े और विपुल भाण्डार दिये। इतना सम्मान, धन और वैभव प्राप्त कर भी कुमार अगडदत्त मदनमंजरी के बिना अपना जीवन निरर्थक समझता रहा।'

अन्य किसी एक दिन, मदनमंजरी की एक दासी 'संगमी' कुमार के पास आई और कहने लगी कि आपके विरह में मदनमंजरी जल रही है। आपके अभाव में उसका जीवित रहना सम्भव नहीं। अतः, आपको चलकर उसको ढाढ़स बँधाना चाहिए। कुमार ने दासी का वचन सुनकर कहा : "तुम जाकर मदनमंजरी से कहो कि मैं समय पाकर अवश्य ही उसे सुखी बनाऊँगा। वह अपने मन में किसी प्रकार की भी चिन्ता न करे।"

१२. कुछ दिनों बाद एक ऊँट पर सवार दो व्यक्ति आये। कुमार उनसे बहुत प्रसन्नतापूर्वक मिला और अपने माता-पिता का कुशल समाचार पूछा। उन्होंने कहा : "तुम्हारे माता-पिता (राजा सुन्दर और रानी सुलसा) सकुशल हैं। पर, यदि तुम जल्दी चलकर उनसे नहीं मिलोगे, तो वे रो-रोकर तुम्हारे वियोग में अपने प्राण दे देंगे। तुमसे मिलने के लिए वे अत्यन्त लालायित हैं।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१३. कुमार अपने स्कन्धावार को तैयार कर राजा के पास आया और नम्रतापूर्वक बोला : "महाराज ! मेरे पिता के यहाँ से दो व्यक्ति मुझे लिवा ले जाने के लिए आये हैं। आप जैसा आदेश दें, वैसा ही करुँ।" राजा ने उसे जाने की अनुमति दे दी, किन्तु फिर लौट आने को भी कहा।

१४. राजा का आदेश पाते ही अगडदत्त मदनमंजरी के साथ शंखपुर के लिए रवाना हुआ। रास्ते में चलते-चलते वह एक महाभयंकर वन में पहुँचा। अब वर्षा ऋतु आ गई थी। जिस वन से कुमार जा रहा था, उस वन में एक **भिल्लराज** अपनी सेना के साथ निवास करता था। कुमार की सेना के साथ उसकी सेना का युद्ध होने लगा। पहले तो कुमार की सेना ने **भिल्लसेना** को तितर-बितर कर दिया, पर बाद में भिल्लसेना ने कुमार के सभी सैनिकों को तितर-बितर कर भगा दिया। अब कुमार और भिल्लराज के बीच भयानक युद्ध होने लगा। किन्तु, एक दूसरे को वश में करने का, दोनों का ही प्रयत्न निष्फल रहा। अतः, कुमार ने मदनमंजरी से कहा कि तुम अपना शृंगार कर रथ के आगे बैठ जाओ। कुमार के कथनानुसार मदनमंजरी रथ के आगे बैठ गई। जब भिल्लराज ने मदनमंजरी के अपूर्व सौन्दर्य को देखा, तब वह मुग्ध रह गया और बाण चलाना ही भूल गया। इसी बीच कुमार ने छल द्वारा भिल्लराज को मार गिराया।

१५. राजकुमार अगडदत्त ने देखा कि रथ के सिवा वहाँ अब एक भी सैनिक नहीं है, सभी इधर-उधर छिन्न-भिन्न हो गये हैं। अतः, वह अकेला ही आगे बढ़ा और किसी प्रकार उसने उस दुर्गम वन को पार किया। आगे चलने पर उसे एक रमणीय गोकुल मिला। यहाँ उसे दो व्यक्ति मिले, जिन्होंने कुमार से कहा कि हम भी शंखपुर चल रहे हैं। आपके साथ चलने से हमारा मार्ग भी निर्विघ्न कट जायगा। आगे बढ़ने पर जब दो मार्ग आये, तब उन्होंने एक मार्ग की ओर संकेत करते हुए कहा कि इस मार्ग में दुर्जन चोर, मदोन्मत्त हाथी और दृष्टिविष (जिसकी दृष्टि में भी विष रहता है) सर्प

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहते हैं तथा सिंह, व्याघ्र आदि अन्य हिंसक प्राणी भी निवास करते हैं। अतः, इस रास्ते से न जाकर दूसरे से चलना चाहिए।

१६. अगडदत्त ने उनको धैर्य बँधाते हुए कहा : "आप सभी निर्भय होकर चलें। मैं सकुशल आपलोगों को शंखपुर पुहुँचा दूँगा। कुमार की इन बातों को सुनकर अन्य यात्री भी प्रसन्नतापूर्वक उसके साथ चलने लगे। कुछ दूर आगे बढ़ने पर जटाजूट बढ़ाये, शरीर में भस्म रमाये और भिक्षापात्र हाथ में लिये एक परिव्राजक आया और कहने लगा : "कुमार ! मैं भी तीर्थ-यात्रा के निमित्त शंखपुर चल रहा हूँ। मेरे पास कुछ स्वर्णमुद्राएँ (दीनार) हैं, आप इन्हें अपने पास रख लें, जिससे मैं निर्भय होकर आपके साथ चल सकूँ।" कुमार ने उस परिव्राजक से दीनार ले लिये। इस पर उस परि-व्राजक ने कुमार को आशीर्वाद दिया। उस परिव्राजक की वेष-भूषा से कुमार को आशंका हुई और वह उसके साथ की यात्रा को अनिष्टकर समझता हुआ आगे बढ़ने लगा।

१७. कुछ दूर चलने के बाद उस परिव्राजक ने कहा। "साथियो, यहाँ का गोकुल मेरा सुपरिचित है। मैंने एक बार यहाँ चातुर्मास किया है, जिससे सभी गोपालक मुझे खूब आदर देते हैं। अतः, आज आप लोगों का भोजन यहीं होगा।" इतना कहकर वह (परिव्राजक) गोकुल में गया और वहाँ से दही, घी तथा दूध से भरे हुए बरतन ले आया और अगडदत्त से कहा : "कुमार ! आप मेरा आतिथ्य स्वीकार करें।" यह सुनकर अगडदत्त ने कहा : "मेरे सिर में आज अपार वेदना है, अतः भोजन करने की इच्छा नहीं है, और फिर संन्यासी का भोजन लेने से मैं असमर्थ हूँ।" अगडदत्त ने संकेत से अपने अन्य साथियों को भी भोजन करने से रोका, किन्तु वे न माने और उस विष-मिश्रित भोजन को ग्रहण करते ही मूर्च्छित हो गये, फिर थोड़ी ही देर में उनकी मृत्यु भी हो गई।

१८. जब कुमार ने भोजन नहीं किया, तब वह परिव्राजक बहुत नाराज हुआ और उस कुमार को भी मारने के लिए दौड़ा। कुमार ने अपने बाण से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसको मार गिराया। मरते समय उसने कहा : "कुमार ! मैं **दुर्योधन** नाम का दुर्जेय चोर हूँ। मैं तुम्हारी निर्भीकता से बहुत प्रसन्न हूँ। अतः, तुमसे एक बात कहता हूँ। इस पर्वत के वामपार्श्व में दो नदियों के बीच एक देवालय है। उसके पश्चिम की ओर एक शिला है। उस शिला को उठाने पर तुम्हें एक तलघर मिलेगा। उस तलघर में मेरी सुन्दर रूप—लावण्य वाली पत्नी रहती है। वहाँ अपार धनराशि भरी पड़ी है। तुम उस धन का उपभोग करना।"

१९ उस दुर्योधन चोर की मृत्यु हो जाने पर कुमार अगडदत्त ने उसका दाह-संस्कार किया और रथ को उसके द्वारा बताये गये स्थान पर ले गया। शिला के उठाते ही उसे तलघर का दरवाजा मिला और भीतर जाने पर उस चोर की **जयश्री** नाम की सुन्दर पत्नी दिखाई पड़ी। कुमार अगडदत्त उस नारी के लावण्य को देखते ही उस पर मुग्ध हो गया। मदनमंजरी ने जब कुमार की यह दशा देखी, तब उसने कुमार को हाथ से झटका देते हुए क्रुद्ध होकर कहा : "मैंने तुम्हारे लिए अपने माता, पिता, भाई, सखी आदि कुटुम्बियों तथा समस्त सुख को छोड़ा है और तुम इस प्रकार की निर्लज्जता कर रहे हो ?" मदनमंजरी के इन वचनों को सुनते ही कुमार सावधान हो गया और रथ पर सवार होकर आगे बढ़ा। आगे चलने पर उसे मदोन्मत्त हाथी, वाघ और दृष्टिविष सर्प मिले, किन्तु अगडदत्त उन्हें वीरता पूर्वक परा-जित कर सकुशल शंखपुर पहुँचा।

२०. कुमार के आगमन से उसके माता-पिता बहुत सन्तुष्ट हुए। भोजन बाद, परदेश में रहने का समस्त वृत्तान्त और घटी हुई घटनाएँ कुमार ने अपने माता-पिता से कह सुनाईं। इस प्रकार, आनन्दपूर्वक राज्यसुख भोगते हुए उनका समय बीतने लगा।

२१. अन्य किसी समय रसिकजनों के लिए सुखदायक वसन्त ऋतु आई। राजा परिजन और पुरजन-सहित उद्यान-यात्रा पर गया। साथ में मदनमंजरी साथ कुमार अगडदत्त भी गया। नाना प्रकार की क्रीड़ाएँ करके राजा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथा नगरवासी लौट आये। कुमार अगडदत्त भी अपने सभी स्वजनों को विदा कर जब रथ के पास आया, तभी मदनमंजरी को एक विषैले साँप ने डँस लिया। मदनमंजरी 'हाय, हाय' करती हुई कुमार की गोद में गिर पड़ी। कुमार ने विष दूर करने का बहुत प्रयत्न किया; किन्तु सब व्यर्थ रहा। जब वह निर्जीव हो गई, तब कुमार ने विलाप करना आरम्भ किया। किसी प्रकार धैर्य धारण कर उसने लकड़ियों की चिता बनाई और उस चिता में पत्नी के साथ उसने स्वयं भी जल मरने का निश्चय किया।

२२. संयोग से उसी समय दो विद्याधर वहाँ आये और उन्होंने कहा: "महानुभाव! आप अपने प्राणों को अकारण ही क्यों नष्ट कर रहे हैं? हम आपकी पत्नी को जीवित कर देते हैं।" यह कहकर उन्होंने मंत्रित जल मदनमंजरी के शरीर पर छिड़का। जल के छींटे लगते ही वह निद्रा से, सोते हुए के समान, जाग उठी और कहने लगी कि "मैं कहाँ हूँ" ?

२३. मदनमंजरी के जीवित हो जाने पर दोनों विद्याधर आकाशमार्ग से चले गये और कुमार अपनी प्रिया के साथ उस अँधेरी रात्रि में पासवाले देवालय में पहुँचा। उसने अपनी पत्नी से कहा: "मैं जब तक बाहर से आग लेकर आता हूँ, तुम यहीं पर ठहरो।" जब कुमार आग लेकर वापस आया, तब उसने उस देवालय में दीपक का प्रकाश देखा। वह उस प्रकाश के बारे में अपनी पत्नी से पूछने लगा। पत्नी ने बहाना बनाकर कहा कि दीपक यहाँ कहाँ से आया? आप जो अग्नि लाये हैं, उसी के प्रकाश का प्रतिबिम्ब आपको दिखाई पड़ा होगा। कुमार अगडदत्त अपनी तलवार मदनमंजरी को देकर नीचे झुका और आग को फूँककर प्रज्वलित करने लगा। इसी बीच उसने तलवार के गिरने की आवाज सुनी। चौंककर कुमार ने पूछा कि यह नंगी तलवार फर्श पर कैसे गिरी? तब, मदनमंजरी ने कहा: 'मेरे मन में इस बात को जानने का कौतूहल हुआ कि नंगी तलवार कैसी लगती है? अतः, मैं म्यान से तलवार को अलग कर घुमाने लगी, तभी मेरे हाथ से छूटकर फर्श पर गिर पड़ी।" किन्तु, यह तो उसका केवल बहाना मात्र ही था। वास्तविकता कुछ और थी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवालय में रात्रि व्यतीत कर वह कुमार अपने नगर में लौट आया और सांसारिक विषय-सुखों का अनुभव करते हुए समय बिताने लगा।

२४. अन्य किसी एक दिन वह कुमार बाह्याली में एक दुष्ट घोड़े की सवारी कर रहा था कि वह घोड़ा कुमार को लेकर जंगल की ओर भागा और एक तापस के आश्रम में पहुँचा। कुमार घोड़े से उतरकर इधर-उधर परिभ्रमण करने लगा। वह एक मंदिर में पहुँचा और वहाँ उसे **सहस्रगति** नामक एक ऋद्धिधारी साधु मिले। उसने उनकी वन्दना की और उनसे पूछा। प्रभो ! आपको घेरकर बैठे ये पाँच सुन्दर युवक कौन हैं, जो इस चढ़ती उम्र में भी विरक्त होकर आपसे दीक्षा माँग रहे हैं ?" तब मुनि ने कहा :

२५. "इस वन में **चमरी** नाम का एक गाँव है। इसमें **धरणीधर** नाम का भीलों का एक बलशाली सरदार रहता था। कुछ दिन पहले वहाँ ससैन्य एक राजकुमार अपनी सुन्दरी पत्नी के साथ आया। भिल्लराज और कुमार में युद्ध हुआ। कुमार भिल्लराज को जब बाहुबल द्वारा परास्त न कर सका, तब उसने अपनी रूपवती पत्नी को रथ के आगे बैठाया, जिसे देखते रहने से वह धरणीधर उस नारी के कटाक्षों से घायल हो गया और बाण चलाना ही भूल गया। तब, कुमार ने अवसर पाकर उसका वध कर डाला और अपनी भार्या के साथ वहाँ से चल पड़ा। ये पाँचों व्यक्ति उसी के छोटे भाई हैं। इन्होंने बड़े भाई के वध करनेवाले से बदला लेने के लिए ये पाँचों उस कुमार के पीछे-पीछे चले। ये अवसर की प्रतीक्षा में थे कि कभी एकान्त में उस कुमार की हत्या करेंगे।

२६. अतः, जब वह कुमार वसन्त ऋतु में वन-विहार के लिए गया, तब ये भी छिपे रूप में वहाँ पहुँचे। वन-विहार के बाद जब कुमार रथ पर सवार होने लगा, तभी उसकी प्रिय पत्नी को एक विषैले सर्प ने डँस लिया और वह मर गई। कुमार पत्नी के वियोग से दुःखित हो चिता बनाकर पत्नी के शव के साथ जलने को तैयार हो गया, उसी समय दो विद्याधर वहाँ आये, जिसने कुमार की पत्नी को जीवित कर दिया। कुमार पत्नी के साथ रात्रि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में एक देवालय में ठहर गया। वहाँ ये पाँचों भाई छिपकर कुमार को मारने के लिए मौका ढूँढ़ रहे थे। जब कुमार अग्नि लाने के लिए देवालय से बाहर गया, तब इन्होंने अपने छिपाये हुए दीपक को प्रकाशित किया। उस दीपक के प्रकाश में उस कुमार की पत्नी ने इन्हें देख लिया और इनके सबसे छोटे भाई के सौन्दर्य पर वह मोहित हो गई। उसने उससे कहा : मैं तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकती। अतः, तुम मेरे साथ विवाह कर लो।, छोटे भाई ने कहा : 'तुम्हारा पति बहुत बलवान् है। यदि उसे यह मालूम हो जायगा, तो वह मुझे मार डालेगा।' तब वह बोली : 'मैं तुम्हारे सामने अपने पति की हत्या स्वयं ही कर देती हूँ।'

२७. जब वह कुमार आग लेकर आया और उसने दीपक के प्रकाश के सम्बन्ध में पूछा, तब उस युवती ने झूठ बोलकर उस कुमार को धोखा दिया कि उसने अपनी लाई हुई आग का ही प्रतिबिम्ब देखा है। कुमार जब सिर नीचे झुककर अग्नि को जलाने लगा, तब युवती ने तलवार से उसका वध करना चाहा। पर, इस दयालु वीर (छोटे भाई) ने निरपराध कुमार को बचाने के लिए युवती के हाथ को झटका दिया, जिससे तलवार हाथ से छूटकर गिर गई। उस मायाविनी नारी की विचित्र चेष्टा देखकर इन सभी भाइयों को विरक्ति हो गई है, अतः ये (पाँचों भाई) अब दीक्षा लेने के लिए तैयार हैं।"

यह सुनकर उस कुमार ने कहा : "प्रभो ! मैं ही इनके भाई का घातक हूँ। यह घटना मेरे साथ ही घटी है। आपने मेरा ही चरित कहा है। मैं भी अब इस संसार से पूर्ण विरक्त हूँ। अतः, मुझे भी दीक्षा प्रदान करने की कृपा करें।"

तब श्रमण साधु ने कृपापूर्वक उसे दीक्षा दी और वह कठोर तपश्चरण में संलग्न हो गया।

३. प्रश्न : अगडदत्त की चरित्रगत विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर : कथा के प्रारम्भ में राजकुमार अगडदत्त एक अत्यन्त ही निम्न कोटि के व्यक्ति के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होता है। वह जुआ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खेलता है, मांस खाता है, शराब पीता है और वेश्याओं का संग करता है। इस प्रकार पाठक प्रारम्भ में अगडदत्त को एक अधम प्रकृति का राजकुमार समझते हैं। परन्तु, धीरे-धीरे पाठक की मनोवृत्ति कुमार अगडदत्त के प्रति बदलती जाती है।

कलाओं का ज्ञाता राजकुमार : पिता द्वारा निष्कासित कुमार अगडदत्त पवनचण्ड नामक गुरु का आश्रय लेता है। वहाँ वह थोड़े ही समय में बहत्तर प्रकार की कलाओं का ज्ञाता बन जाता है। इतने कम समय में इतनी कलाओं की जानकारी प्राप्त कर लेना निश्चय ही एक विस्मयकारी कार्य है।

सुन्दर राजकुमार : वह अगडदत्त सुप्रसिद्ध कलाओं का ज्ञाता ही नहीं था, बल्कि शारीरिक सुन्दरता भी उसमें अपूर्व थी। नगर के प्रधान सेठ की पुत्री मदनमंजरी उसकी सुन्दरता पर अपने-आपको न्यौछावर करती थी।

साहसी एवं वीर अगडदत्त: अगडदत्तकथा में कई स्थानों पर अगडदत्त ने अपने वीरत्व का परिचय दिया है। मदोन्मत्त हाथी को उसने अपने वश में कर लिया था। चोरों को पकड़ चुका था। भीषण अटवी से जाते समय कई भयानक दुष्ट व्यक्तियों से मुकाबला कर चुका था। वह बाघ को मारने और सर्प को अपने वश में करने में भी समर्थ था। इस प्रकार, हम कह सकते हैं कि वह अत्यन्त ही साहसी एवं वीर था।

कामी अगडदत्त : अगडदत्त का कामी रूप भी एक स्थल पर हमारे समक्ष प्रस्तुत हुआ है। राजसम्मान, जनसम्मान, अतुल वैभव, अपूर्व सुन्दरता आदि सब कुछ पाकर भी वह मदनमंजरी के अभाव में अपने जीवन को निरर्थक समझता है।

प्रत्युत्पन्नमति अगडदत्त : किस अवसर पर कैसा व्यवहार करना चाहिए, यह कुमार अगडदत्त अच्छी तरह जानता है। कपटवेशधारी चोर को वह तुरन्त पहचान लेता है। घबराई हुई मदनमंजरी को वह आश्वस्त तो करता है, किन्तु बाणों के प्रहार से चोर को मारने में जब वह सफल नहीं होता, तब मदनमंजरी को ही माध्यम बनाकर सफलता प्राप्त करता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुष्ट चोर द्वारा प्रस्तुत किये गये विष-मिश्रित दूध-दही का पान वह नहीं करता है।

दयालु अगडदत्त : अगडदत्त अत्यन्त दयालु भी है। मदनमंजरी को सातिशय दुःखी देखकर उसके प्रति उसका हृदय आर्द्र हो उठता है। रास्ते में अन्य व्यक्तियों को भी वह अपने संग ले लेता है। पुरजनों के साथ दया एवं स्नेह का व्यवहार करता है। दान-धर्म के प्रति भी उसकी सहज अभिरुचि है।

नीतिज्ञ अगडदत्त : अगडदत्त नीतिविद्या का प्रकाण्ड पण्डित है। जगह-जगह वह नीति की बातों को सोचता है और उन्हीं के अनुसार आचरण भी करता है।

सच्चा प्रेमी अगडदत्त : अगडदत्त एक सच्चा प्रेमी भी है। अपनी प्रियतमा की मृत्यु के पश्चात् उसके विरह से व्याकुल होकर वह भी पत्नी के शव के साथ चिता में जल मरना चाहता है।

कर्त्तव्यपरायण अगडदत्त : अगडदत्त अपने कर्त्तव्यों को अच्छी तरह जानता है। वह अपने वचन से च्युत होनेवाला व्यक्ति नहीं है। मदनमंजरी के प्रति भी वह अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है।

व्यवहारज्ञ अगडदत्त : अगडदत्त का व्यवहार अत्यन्त ही उत्तम कोटि का है। उसमें विनयशीलता कूट-कूटकर भरी हुई है। वह जानता है कि गुरु, माता-पिता, पत्नी एवं पुरजनों के साथ कैसा व्यवहार किया जाना चाहिए।

संयमी एवं तपस्वी अगडदत्त : कथानक के अन्त में एक तपस्वी के रूप में अगडदत्त हमारे सामने उपस्थित होता है। वसन्तोत्सव के समय अपनी प्रियतमा का छलनापूर्ण प्रेम देखकर उसे इस संसार से विरक्ति हो जाती है और वह कठिन व्रतों के पालन में लीन हो जाता है।

इस प्रकार, कुमार अगडदत्त का चरित्र अत्यन्त ही महार्घ है। इस कथा द्वारा जीवन-निर्माण के प्रेरक तथ्यों के उद्भावन में कवि का प्रयास, निश्चय ही प्रशंसनीय है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४. प्रश्नः अगडदत्त का चरित्र-चित्रण करें।

उत्तर : अगडदत्त का चरित्र भारतीय आख्यानों में बहुत ही सन्तुलित रूप में हुआ है। कवि ने इसे पूर्णतया निर्वैयक्तिक बनाने का प्रयास किया है। यद्यपि वह अन्त में अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करता हुआ दिखाई पड़ता है, तथापि, यह कथन अनुचित न होगा कि अगडदत्त का चरित्र बहुत ही सजीव सार्वभौम एवं रोमांचक बन पड़ा है।

आरम्भ में अगडदत्त एक आवारा, अज्ञान और धूर्त्त के रूप में हमारे सम्मुख आता है। किन्तु, 'संगति ही गुण उपजै' की कहावत के अनुसार, बनारस में गुरु के सम्पर्क में आते ही उसकी प्रवृत्तियाँ बिलकुल बदल जाती हैं। वह कर्तव्यपरायण, कठोर परिश्रमी और उद्देश्य की सिद्धि के लिए 'शरीरं पातयामि कार्यं साधयामि वा' का सिद्धान्त अपनाता हुआ दृष्टि-गोचर होता है।

अगडदत्त के चरित्र की दूसरी विशेषता है साहसपूर्ण कार्यो का सम्पादन। वह असम्भव से भी असम्भव कार्यो को भी सम्भव करने के लिए प्रस्तुत हो जाता है। मदोन्मत्त हाथियों को वश में करना, बड़े-बड़े चोर एवं डाकुओं को पकड़ना, बाघ जैसे हिंसक जन्तुओं को मारना तथा साँप जैसे विषैले जीवों को वश में करना उसके लिए आनन्द के विषय बन जाते हैं। परिश्रम के बल पर व्यक्ति का जीवन कितना ऊँचा उठ सकता है, यह हमें अगडदत्त के चरित्र से स्पष्ट विदित हो जाता है।

निरा मूर्ख अगडदत्त वाराणसी में रहकर अपने गुरु की सेवा करते हुए कला-कौशल और विभिन्न विद्याओं में अपने घोर परिश्रम के बल से प्रवीणता प्राप्त कर लेता है। वह अपने विद्यार्जन में इतना तल्लीन रहता है कि मदनमंजरी द्वारा विघ्न उपस्थित किये जाने पर भी उसे उसका कुछ भी पता नहीं चलता।

विपत्ति और बाधाओं को सरलतापूर्वक सह लेना उसके लिए सामान्य बात है। अश्व-संचालन, हस्तिसंचालन, नाग-दमन आदि विद्याओं की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उसे बहुत अच्छी जानकरी है। तन-मन की सुधि भूलकर वह ज्ञानार्जन में ही तल्लीन रहता है। थोड़े ही समय में वह पूर्ण ज्ञानवान् एवं कलामर्मज्ञ बन जाता है।

अगडदत्त के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता उसका प्रत्युत्पन्नमतित्व है। अवसर आने पर वह तुरन्त ही अपने कर्त्तव्य का निश्चय कर लेता है। अपने नगर की ओर बढ़ते हुए मार्ग में उसे भिल्लराज से युद्ध करना पड़ता है। जब वह अपने बाहुबल से भिल्लराज को परास्त नहीं कर पाता, तब अपने बुद्धिबल का प्रयोग करता है। उसके अपूर्व सांग्रामिक प्रयास के समक्ष भिल्लराज का वश नहीं चलता और वह उससे सहज ही पराजित हो जाता है।

अगडदत्त एक दृढप्रतिज्ञ व्यक्ति के रूप में भी सामने आता है। बहुत दिनों के बाद भी जब भुजंगम चोर का पता नहीं लगता, तब उस नगरी का राजा बहुत चिन्तित होता है। इस बात को सुनकर अगडदत्त स्वयं ही राजा के पास जाता है और दृढ निश्चयपूर्वक कहता है :

"मज्झे सत्तदिणाणं पुरचोरं नो लहामि जइ नाह।
तो जलियजलणजालावलीसु जालेमि नियदेहं" ॥
(गाथा-सं० ८८)

अर्थात्, सात दिनों के अन्दर यदि मैं चोर का पता न लगाऊँ, तो मैं जलती अग्नि की ज्वाला में अपने को भस्म कर दूँगा। इस प्रकार प्रतिज्ञा लेकर वह अन्ततः चोर को पकड़कर राजा के सामने ला देता है। भुजंगम चोर का वध करने के अनन्तर वह उसके घर जाता है। भुजंगम चोर की युवती बहन अपने भाई के हत्यारे को मार डालना चाहती है। पर, अगडदत्त की बुद्धि के समक्ष उसकी एक भी नहीं चलती।

इस प्रकार, हम अगडदत्त में अपूर्व प्रतिभा पाते हैं। अगडदत्त जितना साहसी है, उतना ही बुद्धिमान् भी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृति-प्रेम भी अगडदत्त के जीवन का एक विशेष गुण है। शंखपुर पहुँचते ही वह वसन्तोत्सव के अवसर पर वन-विहार के लिए मदनमंजरी के साथ जाता है और विभिन्न प्रकार की उद्यान-क्रीड़ाओं द्वारा आनन्द का अनुभव करता है। इसमें सन्देह नहीं कि प्रकृति सदा से ही मानव की सहचरी रही है। प्राचीन एवं मध्यकाल में जब मनोरंजन के साधन बहुत ही सीमित थे, तब मानव उद्यान-विहार द्वारा अपना मनोरंजन किया करता था। अगडदत्त में भी वह गुण पूर्णतया वर्त्तमान है।

अगडदत्त सच्चा प्रेमी है। उसके जीवन में वासनात्मक प्रेमी का स्थान नहीं है। वह ऐसा नायक है, जो सौन्दर्य-मात्र से ही मदनमंजरी को अपनी ओर आकृष्ट नहीं करता, अपितु अपने वीरतापूर्ण दुस्साहसिक कार्यों द्वारा भी उसके हृदय को जीत लेता है। वह मदनमंजरी क अभाव में जीवित रहना नहीं चाहता। जब सर्प के काटने से मदनमंजरी की मृत्यु हो जाती है, तब वह लकड़ियों की चिता बनाकर स्वयं ही उसके साथ जलकर भस्म हो जाना चाहता है। उसका प्रेमी हृदय एक क्षण के लिए भी प्रेमिका-वियोग सहने में असमर्थ है। उसके प्रेम और साहस से प्रसन्न होकर आकाशगामी विद्याधर उसकी प्रेमिका को जीवित कर देते हैं।

अगडदत्त विश्वासों और संकल्पों का धनी है। जब उसे मदनमंजरी का विश्वासघात अवगत हो जाता है, तब उसकी अन्तरात्मा सिहर उठती है और वह सोचने लगता है कि जिस रमणी के स्नेह में आकर मैंने सर्वस्व त्याग किया, वही महिला यदि मुझे इस प्रकार का धोखा दे, तो मैं इस संसार को विश्वसनीय कैसे समझूँ? फलतः, अगडदत्त का हृदय वैराग्य से भर जाता है और गुरु के उपदेश को सुनकर समस्त सांसारिक भोगों से उसे पूर्ण विरक्ति हो जाती है। वह क्षणिक सुख को त्याग कर शाश्वत सुख की प्राप्ति के लिए दीक्षा धारण कर लेता है।

संक्षेप में, अगडदत्त के चरित्र में मानवता को विकसित करने वाले समस्त गुण विद्यमान हैं। वह सच्चा प्रेमी, शूरवीर, कष्टसहिष्णु, कर्मठ,दयालु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और प्रतिभाशाली है। पुरुषार्थ को सिद्ध करना और उसकी सिद्धि के मार्ग में आगे बढ़ते जाना उसे अच्छी तरह ज्ञात है।

सांसारिक मानव-चरित्र अच्छाइयों के साथ कतिपय बुराइयों से भी भरा होता है। जहाँ अगडदत्त के चरित्र में उपयुक्त गुण विद्यमान हैं, वहीं उसमें एक छोटा-सा दोष भी है। वह दुर्योधन नामक दुर्जेय चोर की पत्नी के अपूर्व सौन्दर्य को देखकर कुछ क्षण के लिए मुग्ध हो जाता है, पर मदनमंजरी द्वारा सावधान किये जाने पर उस ओर से विमुख होने में भी उसे देर नहीं लगती। अतः, अगडदत्त का चरित्र सजीव मानव का चरित्र है, जिसमें गुण और दोष दोनों का सहज समन्वय दिखाई पड़ता है।

५. प्रश्न : अगडदत्तचरित के कवि का परिचय प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर : अगडदत्तचरित के लेखक का नाम **देवेन्द्र गणि** है। उनका दूसरा नाम **नेमिचन्द्र सूरि** भी प्रसिद्ध है। प्राकृत-साहित्य में इन दोनों नाम के अनेक आचार्य हुए हैं, जिससे उनके काल के निर्धारण में अनेक भ्रम एवं कठिनाइयाँ उत्पन्न होती रही हैं। किन्तु, इस ग्रन्थ के लेखक के सम्बन्ध में, 'आख्यानमणिकोष' नामक ग्रन्थ की एक प्रशस्ति में प्रामाणिक जानकारी मिल जाती है।

उक्त प्रशस्ति के अनुसार अगडदत्त के लेखक का प्रारम्भिक नाम **देवेन्द्र गणि** था और गुरु से दीक्षा लेने के बाद उनका नाम बदलकर **नेमिचन्द्र सूरि** हो गया था।

देवेन्द्र गणि की जन्मतिथि के सम्बन्ध में कोई भी सन्दर्भ-सामग्री उपलब्ध नहीं है, किन्तु उनकी रचनाओं में प्राप्त प्रशस्तियों के आधार पर उनका रचनाकाल सन् १०७२ से १०८४ ई० के मध्य सिद्ध होता है।

उनकी साहित्य-साधना के प्रमुख केन्द्र दण्डिलपाद्र, चन्द्रावती एवं अणहिल-पाटन थे। इन नगरों को देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि उनकी जन्मभूमि गुजरात रही होगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवेन्द्र गणि या नेमिचन्द्र सूरि अपने समय के प्राकृत के प्रख्यात विद्वान् लेखक के रूप में प्रसिद्ध थे। उनकी निम्नांकित रचनाएँ उपलब्ध एवं प्रकाशित हैं :

१. **आख्यानमणिकोष** : इसमें अनेक सुन्दर, सरस एवं लोकोपयोगी प्राकृत-कथानक उपलब्ध हैं। इसका मूल आधार 'उत्तराध्ययनसूत्र' नामक ग्रन्थ की सुखबोधा टीका है। लेखक ने इसकी रचना सन् १०७२ ई० में की थी।

२. **रयणचूडरायचरियं** : यह प्राकृत -गद्य में चरित धर्मकथा-प्रधान ग्रन्थ है। इसकी सूक्तियाँ अत्यन्त मार्मिक एवं चित्रशैली अत्यन्त मनोमोहक है।

३. **सुखबोधा टीका** : यह एक टीकाग्रन्थ है। अर्धमागधी-आगम-साहित्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थ 'उत्तराध्ययनसूत्र' पर यह टीका लिखी गई थी। भारतीय कथा-साहित्य के विकास की दृष्टि से इसकी कथाओं का अध्ययन अनिवार्य है।

४. **महावीरचरियं** : कवि ने इसकी रचना सन् १०८४ ई० में की थी। इसमें वैशाली (बिहार) के शलाकापुरुष भगवान् महावीर के जीवनचरित पर समीचीन प्रकाश डाला गया है। प्राचीन बिहार के प्रामाणिक इतिहास को समझने के लिए भी इस ग्रन्थ का अध्ययन नितान्त आवश्क है।

उक्त रचनाओं का अध्ययन करने से यह स्पष्ट विदित होता है कि **देवेन्द्र** गणि अथवा आचार्य **नेमिचन्द्र सूरि** अपने समय के ऐसे प्रख्यात लेखक, इतिहासकार, दार्शनिक एवं साधक विद्वान् थे, जिन्होने परवर्त्ती लेखकों को साहित्य-लेखन के लिए पर्याप्त प्रेरणा दी।

६. प्रश्न: निम्नलिखित शब्दों पर व्याकरणबोधक टिप्पणियाँ लिखिए

उत्तर :

१. **पढमा**—प्रथमा=प्राकृत-व्याकरण के नियमानुसार प्र के स्थान पर प और थ के स्थान पर ढ होने से 'पढमा' रूप बना है।

२. **वड्ढंतो**—√वृध्+शतृ=बढ़ते हुए। प्राकृत-व्याकरण के नियमानुसार प्राकृत में संस्कृत की √वृध् धातु के स्थान पर वड्ढ आदेश होता है तथा वर्त्तमानकालिक 'न्त' नामक कृत्-प्रत्यय के जोड़ने से यह रूप बनता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३. **पत्तो**—प्राप्तः=प्राप्त हुआ। प्र के स्थान पर प और विजातीय वर्ग के संयुक्त 'प्त' में से प का लोप कर त को द्वित्व कर देने एवं संयुक्त के पूर्ववर्त्ती आकार को ह्रस्व कर देने से 'पत्तो' रूप बना है।

४. **केरिसो**—कीदृशः=कैसा या किस प्रकार के स्वभाव का। संस्कृत के कीदृश के स्थान पर प्राकृत में केरिस आदेश होता है और विसर्ग के स्थान पर ओत्व होने से 'केरिसो' रूप बनता है।

५. **निस्संको**—निःशंकः=निडर। तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स और विसर्ग को स कर देने तथा अन्तिम विसर्ग का ओत्व कर देने से 'निस्संको' रूप बना है।

६. **मज्जं**—मद्यम्=शराव। द्य के स्थान पर प्राकृत में ज्ज आदेश होने से 'मज्जं' रूप बना है।

७. **सुणिऊण**—श्रुत्वा=सुनकर। √श्रु के स्थान में प्राकृत में सुण आदेश हुआ है और सम्वन्धभूत कृत्-प्रत्यय-तूण (इऊण) जोड़ने से 'सुणिऊण' पूर्व-कालिक क्रिया का रूप बनता है।

८. **सिग्घं**—शीघ्रम्=जल्दी। तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स, संयुक्त रेफ का लोप, घ को द्वित्व और पूर्ववर्त्ती घ को ग तथा सकारोत्तर ईकार को ह्रस्व कर देने से 'सिग्घं' रूप बना है।

९. **वज्जिऊण**—वर्जयित्वा=छोड़कर। संयुक्त रेफ का लोप, ज़ को द्वित्व तथा सम्वन्धभूत कृत्-प्रत्यय तूण (ऊण) जोड़ने और प्रत्यय के पूर्व इकार का आगम होने से 'वज्जिऊण' रूप वनता है।

१०. **नाऊण**—ज्ञात्वा=जानकर। **आचार्य हेमचन्द्र** के अनुसार √ज्ञा को स्थान पर ना और पूर्वकालिक क्रिया को वताने के लिए तूण (ऊण) प्रत्यय जोड़ने से 'नाऊण' रूप वनता है।

5262

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi